॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

सचित्र

शिशुबोध जैनधर्म

पहिला भाग

प्रकाशक

जिनवाणी प्रचारक कार्यालय

१६१।१, हरीसन रोड, कलकत्ता-७

एक आना

विषय सूची

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

सचित्र

शिशुबोध जैनधर्म

पहिला भाग

प्रकाशक

जिनवाणी प्रचारक कार्यालय

१६१।१, हरीसन रोड, कलकत्ता-७

एक आना

प्रार्थना

वीतराग सर्वज्ञ हितकर भविजनकी अब पूरो आस,
ज्ञानभानुका उदय करो मम मिथ्यातमका करो विनाश।
जीवोंकी हम करुणा पालें झूठ वचन नहि कहें कदा,
परधन कबहुँ न हरिहें स्वामी ब्रह्मचर्य व्रत रखें सदा।
तृष्णा लोभ बढ़े न हमारा तोष सुधा निधि पिया करें,
श्रीजिन धर्म हमारा प्यारा इसकी सेवा किया करें।
दूर भगावें बुरी रीतिया सुखद रीतिका करें प्रचार,
मेल मिलाप बढ़ावें हम सब धर्मोन्नतिका करें प्रचार।
सुखदुखमें हम समता धारें रहें अचल जिमि सदा अटल,
न्याय मार्गको लेश न त्यागें वृद्धि करें निज आतमबल।
अष्टकर्म जो दुःख हेतु हैं तिनके क्षयका करें उपाय,
नाम आपका जपें निरन्तर विघ्न शोक सब ही टलजाय।
आतम शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहिं चढ़े कदा,
विद्याकी हो उन्नति हम मे धर्म ज्ञानहू बढ़े सदा।
हाथ जोड कर शीस नवावें तुमको भविजन खड़े खड़े
यह सब पूरो आश हमारी चरण शरणमें आन पड़े

श्री जिनाय नमः।

पहला पाठ

णमोकार मन्त्र

णमो अरिहंताण, णमो-
सिद्धाण, णमो आइरि-
याण, णमो उवज्झायाण
णमो लोए सव्वसाहूण ॥

अरहंतो को नमस्कार
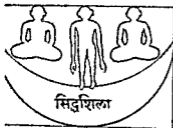
सिद्धोंको नमस्कार

आचार्योंको नमस्कार

उपाध्यायों को नमस्कार

सवसाधुओं को नमस्कार

नोट :—इस मन्त्र में ३५ अक्षर और ५९ मात्रायें हैं।

णमोकार मन्त्र का माहात्म्य

एसो पञ्च णमोयारो सव्वपावप्पणासणं मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं होइ मंगलम

यह णमोकार मन्त्र सब पापों का नाश करनेवाला है और मगलोमे पहला मगल है।

चत्तारि मगल

अरिहता मगल, सिद्धा मगल, साहू मंग केवलिपण्णत्तो धम्मो मगल।

चत्तारि लोगुत्तमा

अरिहता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, सा लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो।

चत्तारिसरण पवज्जामि

अरिहते सरण पवज्जामि, सिद्धे सर पवज्जामि, साहू सरण पवज्जामि, केवलिपण्ण धम्म सरण पवज्जामि।

प्रश्नावली

(१) अनादि निधन मन्त्रका शुद्ध उच्चारण करो। (२) मन्त्र मे किन नमस्कार किया है ? (३) पञ्च परमेष्ठी कौन हैं ? (४) मन्त्रका माहा सहित पढ़ो। (५) इसको पढ़नेसे क्या लाभ है ? कब पढ़ना चाहिये ?

दूसरा पाठ

वर्तमान चौबीस तीर्थङ्करों के नाम तथा चिन्ह ।

श्रीऋषभनाथ — श्रीअजितनाथ — श्रीसंभवनाथ

१ बैल — २ हाथी — ३ घोड़ा

श्रीअभिनन्दननाथ — श्रीसुमतिनाथ — श्रीपद्मप्रभु — श्रीसुपार्श्वनाथ

४ बन्दर — ५ चकवा — ६ कमल — ७ साथिया

श्रीचन्द्रप्रभु — श्रीपुष्पदन्त — श्रीशीतलनाथ — श्रीश्रेयांसनाथ

८ चन्द्रमा — ९ मगर — १० कल्पवृक्ष — ११ गेंडा

श्रीवासुपूज्य — श्रीविमलनाथ — श्रीअनन्तनाथ — श्रीधर्मनाथ

१२ भैंसा — १३ शूकर — १४ सेही — १५ वज्रदण्ड

प्रश्नावली
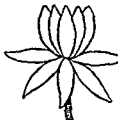
(१) तीर्थङ्कर कितने हैं ? (२) जिन तीर्थङ्करों के दो नाम हैं उनके नाम लो (३) श्रेयांस नमि, कुन्थु पद्मप्रभु, महावीर ये कौनसे तीर्थङ्कर हैं ? (४) १५ ४ से ७ वें तीर्थङ्करों के नाम लो। (५) तीर्थङ्करोंके नाम कब जपना चाहिये क्या चौबीस से अधिक तीर्थकर ... ?

तीसरा पाठ

जीव और अजीव

जीव—जो जाने अर्थात् जिनमें चेतना (ज्ञान दर्शन) पाया जावे, वे जीव हैं।

भावार्थ—जिनमें जानने-देखने की ताकत हो जो खाते-पीते, उठते बैठते, सोते जागते हैं, उन सबमें जीव है।

जैसे—आदमी गाय कबूतर देव नारकी

अजीव—जिनमें ज्ञान अर्थात् चेतना न हो वे अजीव हैं।

जैसे—बाल्टी बेंच घडा टेबिल कुर्सी

चौथा पाठ

इन्द्रिया

जिसके द्वारा जीव जाना जाय अर्थात् जीवके चिन्हको इन्द्रिय कहते हैं, वे पाच होती है।

१ स्पर्शन, २ रसना, ३ घ्राण, ४ चक्षु, और ५ श्रोत्र।

(१) स्पर्शन इन्द्रिय—(त्वचा)-जिसके द्वारा छूनेपर हल्का, भारी, कडा, नर्म इत्यादि का ज्ञान हो उसको स्पर्शन इन्द्रिय कहते हैं।

जैसे—शरीर से छूने पर आग गरम, बर्फ ठण्डा, पत्थर कडा, रुई नरम मालूम पडती है।

आग बरफ पत्थर रुई

(२) रसना इन्द्रिय—(जीभ)–जिसके द्वारा खट्टे, मीठे, चरपरे, कषायले इत्यादि रसोंका ज्ञान हो उसको रसना इन्द्रिय कहते हैं।

जैसे—इमली खट्टी, गन्ना मीठा, मिर्च चरपरी, आंवला कषायला और करेला कड़ुवा रसना इन्द्रियसे मालूम पड़ता है।

इमली गन्ना मिर्च आंवला—करेला

(३) घ्राण इन्द्रिय—(नाक)-जिसके द्वारा सुगध दुर्गन्धका ज्ञान हो उसको घ्राण इन्द्रिय कहते हैं।

जैसे—गुलाब, चमेली, बेलाके फूलम सुगन्ध और सड़ी चीज म दुर्गन्ध आती है।

गुलाब सड़ी चीज

(४) चक्षु इन्द्रिय—(आख)-जिसके द्वारा काले पीले, नीले, लाल, छोटे, बड़े, पतले, मोटे, इत्यादि का ज्ञान हो उसको चक्षु इन्द्रिय कहते हैं

जैसे—कोयला काला, सोना पीला, हाथी मोटा, साप पतला, पहाड बडा और चींटी छोटी मालूम पडती है।

(५) श्रोत्र इन्द्रिय—(कान)-जिसके द्वारा रोना, गाना, पुकारना, चिल्लाना–आदि शब्दोंका भान (ज्ञान) हो उसको श्रोत्र इन्द्रिय कहते हैं।

जैसे—घटे का शब्द, हमारी बातचीत, ग्रामोफोन का गाना इत्यादि।

प्रश्नावली

(१) इन्द्रिय किसे कहते हैं और वे कितनी हैं? (२) सुनना, स्वाद लेना किस इन्द्रियका विषय है? (३) चौथा और दूसरी इन्द्रियके नाम बताओ। (४) चींटीके आंख नहीं होती वह अपने घरमें तथा मिठाइ के पास कैसे चली जाती है? (५) एक जानवर के पास बन्दूक छोडी गयी वह नहीं उडा—क्या कारण है? और कौनसा जानवर है? (६) बिना इन्द्रियके जीव हो सकता है या नहीं? तुम्हारे तथा कुत्ताके कितनी इन्द्रियां हैं?

पांचवां पाठ

पाच तरह के जीव

१ इन्द्री, २ इन्द्री, ३ इन्द्री, ४ इन्द्री और ५ इन्द्री।

[१] एकेन्द्रिय जीव—जिसके केवल स्पर्शन (त्वचा) इन्द्रिय हो उसको एक इन्द्रिय जीव कहते हैं।

जैसे—पृथ्वी, जल, आग, वायु, वनस्पति घास, पेड, पौधे।

[२] दोइन्द्रिय जीव—जिनके दो इन्द्रियां हों अर्थात्—स्पर्शन और रसना हो, वे ही दोइन्द्रिय जीव हैं।

जैसे—कंचुआ, जोक, गिजाई, लट आदि।

[३] तीनइन्द्रिय जीव—जिनके तीन इन्द्रिया हो अर्थात्—स्पर्शन रसना और घ्राण हों उन्हीं को तीन इन्द्रिय जीव कहते हैं।

जैसे—चिऊँटी, खटमल, जू इत्यादि।

[४] चौइन्द्रिय जीव—जीनके चार इन्द्रिया हों अर्थात्-स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु हों उनको चौइन्द्रिय जीव कहते हैं।

जैसे—भौंरा, बर, मक्खी, मच्छर, टिड्डी, ततैया इत्यादि।

[५] पचेन्द्रिय जीव—जिनके सम्पूर्ण पाचो इन्द्रिया हो उन्हें पचेन्द्रिय जीव कहते हैं।

जैसे—देव, नारकी, मनुष्य, स्त्री, कुत्ता, बिल्ली, कबूतर आदि।

एकेन्द्रियसे लेकर पचेन्द्रिय पर्यन्त जीवके क्रमश एक एक इन्द्रिय अधिक होती है। जैसे एकेन्द्रिय जीवको स्वादका ज्ञान नहीं था तो दोइन्द्रियको हो गया। इसी प्रकार दोइन्द्रियको गधका ज्ञान नहीं था तो तीनइन्द्रियको गधका ज्ञान हो गया इत्यादि।

प्रश्नावली

(१) बर, कुत्ता, सिद्ध, सूर्य चन्द्रमा, तारा, रेलगाड़ी, घोड़ा, गायका बछड़ा कुत्ता देवागनाके कौन कौनसी इन्द्रियां हैं? (२) पचेन्द्रिय जीवकी अपेक्षा द्वीन्द्रिय जीवके कौन कौनसी इन्द्रियां कम हैं? (३) जिसके आंख नहीं है उसके नाक होगी या नहीं? (४) जिसके आख हो उसके नाक है या नहीं? (५) हवाके कितनी इन्द्रियां हैं? (६) तुम्हारे और नारकीके कितनी इन्द्रियां हैं? (७) बहरा, गूगाके कितनी हैं?

मेंढककी जिन भक्ति

अधम जीव मेंढक-सा कैसे, महादेव पदवी पाई।
हाथी के पैरों से दबकर, धर्म भावना दिखलाई॥
निर्विकार भावसे जिसने, भक्ति प्रेमको दर्शाया।
जिन ईश्वरकी कृपा-कोरसे, उसने सब कुछ है पाया॥

आर्यावर्तके मगध देशमें, राजगृह नामका एक नगर है। एक दिन वहाके राजा श्रेणिक को, वनपालने भगवान वर्द्धमान तीर्थङ्करके विपुलाचल पर्वतपर आगमन की सूचना दी। राजा, भगवानके आगमनका संवाद सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसी समय उक्त पर्वतपर जाकर भगवानकी पूजा-अर्चना की तथा यतियोंकी वन्दना करने के उपरान्त वहीं बैठकर धर्म चर्चा सुनने लगा। इसी बीचमें मेंढकके चिह्नसे युक्त, मुकुट और ध्वजाके साथ एक देवका पदार्पण हुआ। उसे देखकर श्रेणिकने विस्मय पूर्वक गणधरसे पूछा, भगवन! किस जन्मके पुण्य प्रतापसे यह देव हुआ? गणधरने कहा—"इसी राजगृहमें नागदत्त सेठ और भवदत्ता नामकी सेठानी रहती थी। पूर्ण आयु भोगनेके बाद, सेठजीकी मृत्यु हो गई और वे अपने घरके पीछेकी बावड़ीमें मेंढक होकर टर्र २ करने लगे। एक दिनकी बात है कि मेंढकको अपनी स्त्री सेठानीको देखकर अपने पूर्व जन्मकी बात याद आ गई, और उसे याद कर सेठानीके निकट छलांग मार कर आनेका प्रयत्न करता, किन्तु

सेठानी डरकर भाग जाती। बेचारा मेंढक क्या करता, लाचार होकर अपनी बावडीमें लौट जाता। प्रतिदिन यही घटना घटती। इधर मेंढक अपनी सेठानीसे मिलने के लिये व्याकुल होकर छलाग मारता था, उधर सेठानी डरकर भाग जाती थी। वह बेचारी क्या समझती? प्रतिदिन का यही हाल था। एक दिन सेठानीने, सुव्रत नामक मुनिसे मेंढक की बात कह सुनाई और पूछा, "भगवन्, यह मेंढक कौन है?" मुनि महाराजने कहा, "यह मेंढक तुम्हारे पूर्व जन्मका नागदत्त नामक पति है।" यह सुनकर सेठानीने मेंढकको अपने घरमें लाकर अत्यन्त आदरके साथ रखा। हे राजन! एक दिन ऐसी घटना घटी कि तुमने भगवान के आगमन के आनन्दमे भेरी बजवाई थी, उसे सुनकर मेंढकके हृदय मे, पूर्व सञ्चित भक्तिका स्रोत उमड पडा और वह अपने मुँहमें कमलका फूल लेकर भगवान की पूजाके लिये यहा आ रहा था, तबतक, रास्ते मे तुम्हारे हाथी के पावसे वह मेंढक दबकर मर गया और उसी जिन भक्तिके पुण्यके प्रतापसे वह देव हुआ है। ऐसा सुनकर श्रेणिक महाराज गद्गद् हो गये और सोचने लगे—अहा! जब मेंढक सा अधम जीव, पूजाके अनुमोदनसे देव हो गया तब मनुष्यसे क्या नहीं हो सकता?

॥ समाप्त ॥

सायंकाल की प्रार्थना

हे सर्वज्ञ ! ज्योतिर्मय गुणमणि बालकजन पर करहु दया।
दुमति निशा अंधियारी कारी सत्य ज्ञान रवि छिपा दिया॥१॥
क्रोध मान अरु माया तृष्णा यह बटमार फिरें चहु ओर।
लूट रहे जग जीवनको यह देख अविद्या तमका जोर॥ २॥
मार्ग हमको सूझे नाहीं ज्ञान बिना सब अन्ध भये।
घटमें आय विराजो स्वामी बालक जन सब खडे हुए॥ ३॥
मतपथ दर्शक जनमत हर्षक घट घट अन्तर्यामी हो।
श्री जिनधर्म हमारा प्यारा हमके तुम ही स्वामी हो॥ ४॥
घोर विपत म आन पडा हूँ, मेरा बेडा पार करो।
विद्या का हो घर घर आदर शिल्प कला संचार करो॥ ५॥
मेल-मिलाप बढावें हम सब द्वेष भाव की घटाघटी।
नहीं सताये किसी जीवको प्रीति क्षीर की गटागटी॥ ६॥
मात पिता अरु गुरुजन की हम सेवा निश दिन किया करें।
स्वारथ तजकर सुख दें परको आशिष सबकी लिया करें॥७॥
आतम शुद्ध हमारा होवे पाप मेल नहिं चढे कदा।
विद्या की हो उन्नति हममें धर्म ज्ञान हू बढे सदा॥ ८॥
दो कर जोरें बालक ठाढे, करें प्रार्थना सुनिये तात।
सुखसे बीते रैन हमारी जिनमत का हो शीघ्र प्रभात॥ ९॥
मात पिताकी आज्ञा पालें गुरु की भक्ति धरें उर म।
रहें सदा हम करतब तत्पर उन्नति कर निज निज पुरमें॥१

श्री नेमिनाथाय नम

सचित्र

शिशुबोध जैनधर्म

दूसरा भाग

प्रकाशक
जिनवाणी प्रचारक कार्यालय
१६१।१, हरीसन रोड, कलकत्ता।

दो आना

विपय-सूची

पाठ	विपय	पृष्ठ

श्री वीतरागाय नमः ।

सचित्र

शिशुबोध जैनधर्म

दूसरा भाग

पहला पाठ—दर्शन स्तुति (दौलत कृत)

दोहा—सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्द रस लीन ।
सो जिनेन्द्र जयवत नित, अरि रज रहसि विहीन ॥

पद्धरि छन्द।

जय वीतराग विज्ञान पूर । जय मोह तिमिरको हरन सूर ॥
जय ज्ञान अनतानत धार । दृग सुख वीरज मंडित अपार ॥
जय परम शांति मुद्रा समेत । भविजनको निज अनुभूति हेत ॥
भवि भागनवश जोगे वशाय । तुम धुनिह्वै सुन विभ्रम नशाय ॥
तुमगुण चिंतत निजपर विवेक । प्रगटै विघटै आपद अनेक ॥
तुम जगभूषण दूषण वियुक्त । सब महिमायुक्त विकल्प मुक्त ॥
अविरुद्ध शुद्ध चेतन स्वरूप । परमात्म परम पावन अनूप ॥
शुभ अशुभ विभाव अभाव कीन । स्वाभाविक परिणतिमय अछीन ॥
अष्टादश दोष विमुक्त धीर । स्वचतुष्टयमय राजत गम्भीर ॥
मुनि गणधरादि सेवत महत । नव केवल लब्धि रमा धरन्त ॥
तुम शासन सेय अमेय जीव । शिव गये जांहि जैहैं सदीव ॥
भवसागरमें दुख छार वारि । तारनको और न आप टारि ॥
यह लखि निजदुःख गदहरन काज । तुमहीं निमित्त कारण इलाज ॥

जाने तातैं मैं शरण आय । उचरौं निजदुख ...
मैं भ्रम्या अपनपो विसरि आप । अपनाये विधि फल पुण्य पाप ।
निजको परको करता पिछान । परमें अनिष्टता इष्ट ठान ॥
आकुलित भयो अज्ञान धारि । ज्यों मृग मृगतृष्णा जानिवारि
तन परिणतिमें आपा चितार । कबहु न अनुभयो स्वपद सार
तुमको विन जाने जो कलेश । पाये सो तुम जानत जिनेश।
पशु नारक नरसुरगति मझार । भव धरि धरि मर्यो अनतवार।
अब काल लब्धि बलतैं दयाल । तुम दर्शन पाय भयो खुशाल।
मनशांति भया मिट सकल द्वन्द । चाख्यो स्वातमरस दुख निकंद।
तातैं अब ऐसो करहु नाथ । विछुरैं न कभी तव चरण साथ।
तुम गुणगणको नहिं छेव देव । जगतारनको तुव विरद एव।
आतमके अहित विषय कषाय । इनमें मेरी परिणति न जाय।
मैं रहूं आपमें आप लीन । सो करहु,होउं ज्यों निजाधीन।
मेरे न चाह कछु और ईश । रत्नत्रयनिधि दीजे मुनीश।
मुझ कारजके कारण सु आप । शिव करहु हरहु मम मोह ताप।
शशि शांतिकरण तपहरन हेत । स्वयमेव तथा तुम कुशल देत।
पीवत पियूष ज्यों रोग जाय । त्यौं तुम अनुभवतैं भव नशाय।
त्रिभुवन तिहुंकाल मझार कोय । नहिं तुम विननिज सुखदाय होय
मो उर यह निश्चय भयो आज । दुखजलधि उतारण तुम जहाज।

दोहा—तुम गुणगणमणि गणपति, गणत न पावहिं पार।
'दौल'स्वल्पमति किम कहै, नमूं त्रियोग सम्हार॥

दूसरा पाठ

बारह भावना (भूधर कृत)

अनित्य भावना—राजा राणा छत्रपति, हाथिनके असवार।
मरना सबको एक दिन अपनी अपनी बार॥

भावार्थ—हाथीपर सवारी करने वाले राजा, राणा, छत्रपतियों को अपनी आयुके पूर्ण होनेपर मरना है। जो पदार्थ उत्पन्न होता है, उसका अवश्य नाश होता है। इस प्रकार शरीर आदिका चिन्तवन करना ही अनित्य भावना है।

अशरण भावना—दल बल देवी देवता, मात पिता परिवार।
मरती बिरियाँ जीवको, कोई न राखनहार॥

भावार्थ—सेना, देवी, देवता, माता पिता तथा कुटुम्ब के सभी लोग जब जीव मरता है, तब उसको कोई भी नहीं रख सकता है यह अशरण भावना है॥२॥

ससार भावना—दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान।
कहीं न सुख ससारमें, सब जग देख्यो छान॥३॥

निर्धन परिवार तृष्णाके वश मे सेठ

भावार्थ—धनके बिना गरीब दुखी, और धनकी तृष्णाके कारण धनवान दुखी है। सारे ससारको देख लिया, कहींपर भी रचमात्र सुख नहीं है। देवोंका सुख भी दुखसे युक्त है, इससे वह भी सुखाभास ही है, यथार्थ सुख नहीं है। यह ससार भावना है।

एकत्व भावना—आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय।
यू कबहूँ या जीवको, साथी सगा न कोय॥४॥

भावार्थ—जीव अकेला ही जन्म लेता और अकेला ही मरता है। इसलिये इस जीवका कोई सगा साथी नहीं है। यह एकत्व भावना है॥ ४॥

अन्यत्व भावना—जहां देह अपनी नहीं, तहा न अपना कोय।
घर सम्पत्ति पर प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय॥

भावार्थ—जहां देह तक अपनी नहीं है वहां पर अपना कोई नहीं है। इसलिये अपना घर सम्पत्ति वास्तवमें अपने नहीं हैं और ये कुटुम्ब के लोग भी अपने नहीं हैं। यह अन्यत्व भावना है ॥ ५ ॥

अशुचि भावना—दिपै चामचादर मढी, हाड पींजरा देह।
भीतर या सम जगत में, और नहीं घिनगेह ॥६॥

भावार्थ—हाडके पींजरा की यह देह है। उस पींजरा के ऊपर चमकीली चमडा रूपी चादर तनी है। अगर इस देह के भीतरी भाग को देखोगे तो उसके बराबर दूसरी घिनावनी चीज इस संसार में नहीं है। यह अशुचि भावना है ॥ ६ ॥

आस्रव भावना—मोह नींदके जोर, जगवासी घूमैं सदा।
कर्म चोर चहु ओर, सरवस लूटैं सुध नहीं ॥७॥

मोहनीय कर्म का प्रभाव।

भावार्थ—मोहनीय कर्मसे दुखी जगतके जीव हमेशा संसार में चक्रवत् चक्कर लगाते हैं। आठों कर्मरूपी चोर इस जीवके सब ज्ञान रूपी धनको हर रहे हैं जिसकी सुध जीवको नहीं है। जिसके द्वारा कर्मों का आगमन होता है, उसका नाम है आस्रव। मुख्यतया मन, वचन, कायकी प्रवृत्ति से कर्मों का आगमन होता है ॥ ७ ॥

संवर भावना—सतगुरु देय जगाय, मोह नींद जब उपशमैं।
तब कछु बनहिं उपाय, कर्म चोर आवत रुकैं ॥८॥

सतगुरु को देखते ही कर्म रूपी चोरों का भागना

भावार्थ—जब मोहनीय कर्मका प्रभाव कम होता है तब सच्चे गुरु जगाते हैं। तब कुछ उपाय बनता है और आनेवाले कर्मरूपी चोर रुक जाते हैं। जिस तरह नावका छिद्र बन्द हो जाने से पानीका आना बन्द हो जाता है उसी तरह मोहनीय कर्म का प्रभाव कम होनेसे कर्मों का आना रुक जाता है। यह संवर भावना है।

निर्जरा भावना—ज्ञान दीप तप तेल भर, घर शोधै भ्रम छोर।
या विधि बिन निकसे नहीं, बैठे पूरब चोर ॥
पंच महाव्रत संचरण, समिति पंच परकार।
प्रबल पंच इन्द्रिय विजय, धार निर्जरा सार ॥

ज्ञान रूपी दीपक के प्रकाश से कर्म रूपी चोरों का भागना।

भावार्थ—ज्ञानरूपी दीपकमें तपरूपी तेल भरकर और मिथ्यात्वको हटाकर अपनी आत्माको देखो। इस प्रकार नहीं करने से पूर्वके बैठे हुए कर्म चोर नहीं निकलते हैं। पांच महाव्रत, पांच समिति और बलवान पंचेन्द्रियोंको वशमें करो और श्रेष्ठ निर्जराको धारण करो यह निर्जरा भावना है ॥ ९ ॥

लोक भावना—चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संठान।
तामें जीव अनादितैं, भरमत हैं बिन ज्ञान ॥१०॥
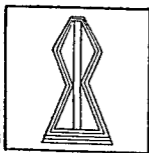
तीन लोक का नक्शा

भावार्थ—यह लोकाकाश १४ राजु ऊंचा है और पुरुषका आकार है। (एक आदमी को खड़ा कर उसके दोनो पाव फैला दो, कमर पर हाथ रख दो, इसको पुरुष आकार कहते हैं) इस लोकमें अनादि कालसे यह जीव बिना ज्ञानके भ्रमण करता फिरता है, यह लोक भावना है ॥ ११ ॥

बोधि दुर्लभ—धनकनकंचन राजसुख सबहि सुलभकरि जान
दुर्लभ है संसारमें, एक जथारथ ज्ञान ॥११॥
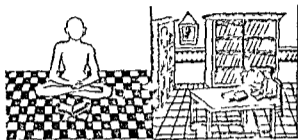
भावार्थ—धन धान्यादिक, सोना, राजसुख सहज ही प्राप्त होते हैं परन्तु संसारमें एक सच्चे ज्ञानका पाना कठिन है, यह बोधि दुर्लभ भावना है ॥ ११ ॥

धर्म—जांचे सुरतरु देय सुख, चिन्तत चिन्ता रैन
बिन जांचे बिन चिन्तये, धर्म सकल सुख दैन ॥ १२

कल्पवृक्ष

भावार्थ—कल्पवृक्ष मांगने पर ही अच्छे पदार्थ देते हैं, चिन्तामणि रत्न चिन्तन करने से ही फल प्रदान करता है। लेकिन बिना मांगने और बिना चिन्तन किये ही धर्म सब सुखोंका देने वाला है। इसलिये धर्म करना चाहिये, यह धर्म भावना है ॥ १२ ॥

प्रश्नावली

१—भावना किसे कहते हैं ? २—वे कितनी हैं नाम कहो। ३—इन कविताओंमें किस बातका कथन है ? अशरण, लोक संवर, अशुचि भावनाओं पर मय चित्र बोलो। बोधि महादान उपशम, कंचन राजर, सुरतरु इन क्या अर्थ हैं ? इनके कर्ता कौन हैं ? क्या आश्रित हैं ? इन भावनाओं से तु क्या समझे ? क्या कुछ आत्म-ज्ञान हुआ ?

तीसरा पाठ

त्रस जीवोंके भेद

त्रस जीव चार तरह के हैं—दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय, और पचेन्द्रिय।

दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय और चार इन्द्रिय विकलत्रय जीव हैं।

चतुरिन्द्रिय पर्यन्त तो सब जीव तिर्यन्च ही हैं, परन्तु पचेन्द्रिय जीवों में जो तिर्यन्च जीव हैं उनके तीन भेद हैं—जलचर, थलचर, नभचर।

१ जलचर—उन्हें कहते हैं जो जलमें रहते, चलते फिरते हों। जलसे अलग करने पर उनका जीना कठिन होता है, जमीन पर नहीं रह सकते—जैसे मगर, घडियाल, मछली कछुआ इत्यादि।

२ थलचर—जो पृथ्वी (जमीन)पर चलते फिरते रहते हैं, जैसे—बैल, हाथी, घोडा, बन्दर, बिल्ली, शेर, हिरण, इत्यादि।
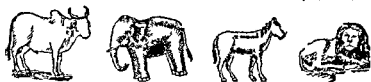
३ नभचर—उन्हें कहते हैं जो आकाशमें उडा करते हैं, जैसे—कौवा, चील, कबूतर, बाज, मोर इत्यादि।

पचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं—(१) सैनी (मनसहित) (२) असैनी (मनरहित)।

१ सैनी जीव—जिनके मन हो, जो शिक्षा, उपदेश ग्रहण कर सकें, हिताहित पर विचार कर सकें, वे सैनी जीव हैं। जैसे पचेन्द्रिय, तिर्यन्च, देव, नारकी, मनुष्य, हाथी, घोडा, गाय, बन्दर, बकरी, हिरण, सर्प, कबूतर, सिंह इत्यादि।

२ असैनी जीव—जिनके मन न हो, जो शिक्षा उपदेश ग्रहण न करें, वे असैनी जीव हैं। ये जीव माता पिता के रज वीर्यके सयोगसे पैदा नहीं होते हैं, किन्तु सम्मूर्छन होते हैं। जलमें रहनेवाला सर्प प्राय. असैनी होता है। कोई कोई तोता भी असैनी होता है और एकेन्द्रियसे चतुरिन्द्रिय तक जीव तो

नियम से ही असैनी होते हैं। जैसे वनस्पति, लट, कीडी, बिच्छू इत्यादि।

प्रश्नावली

(१) त्रस जीवके कितने भेद हैं? (२) विकलत्रय किनको कहते हैं? (३) इन जीवोंमें कौन कौन विकलत्रय हैं—भौंरा, शेर कीड़ा, मकोड़ा, औरत, चींटी, पेड़ खटमल, जूं? (४) सैनी-असैनी किसको कहते हैं? (५) तुम कौन हो? (६) सिद्ध जीव, सूर्य, तारागण, अंडा तुरतका पैदा हुआ बिल्लीका बच्चा, मरा मुर्दा ये सैनी हैं या असैनी? (७) सैनी जीवके अधिकसे अधिक कितनी इन्द्रियां होती हैं? (८) जिस जीवके नाक नहीं हैं उसमें और सैनी जीवमें क्या भेद हैं? (९) इन जीवोंमेंसे कौन-कौनसे जलचर तथा थलचर हैं—हंस, कुत्ता मुर्गी, चील बन्दर मेंढक कछुवा? (१०) क्या समस्त पंचेन्द्रिय जीव सैनी होते हैं? और क्या सब सैनी जीव पंचेन्द्रिय होते हैं? (११) जो जीव आकाशमें ऊंचा उड़ता है और जमीन पर घोंसला बनाता है वह थलचर है या नभचर? (१२) एक बागमें १ कमरखके पेड़ पर २० कोयल बोल रही हैं, ४ गुलाबके पेड़ों पर ७ भौंरे गूंज रहे हैं तो वहां पर कितने सैनी और कितने असैनी जीव हैं?

चौथा पाठ

स्थावर जीवों के ५ भेद

एकेन्द्रिय जीवोंको स्थावर जीव कहते हैं। इनके केवल शरीर होता है। स्थावर जीव पांच प्रकार के होते हैं। १ पृथ्वीकायिक २ अपकायिक ३ तेजकायिक ४ वायुकायिक, ५ वनस्पतिकायिक

पृथ्वी, पानी, आग, हवा, वनस्पति

१ पृथ्वीकायिक जीव—उन्हें कहते हैं जिनका पृथ्वी ही शरीर हो। जो वस्तुए खानसे निकलती है उन सबमें जब तक कि वे वस्तुयें अपनी उत्पत्ति स्थानसे अलग न हों सजीव हैं। उत्पत्ति स्थानसे अलग होने पर अजीव हो जाती हैं जैसे पृथ्वी, मिट्टी, पाषाण, अभ्रक, रत्न, सोना, इत्यादि।

२ अपकायिक जीव—उन्हें कहते हैं जिनका जल ही शरीर हो। जैसे जल, ओला, बर्फ, ओस वगैरह।

३ तेजकायिक जीव—उन्हें कहते हैं जिनका अग्नि ही शरीर हो। जैसे दीपककी लौ, अग्नि, बिजली वगैरह।

४ वायुकायिक जीव—उन्हें कहते हैं जिनका वायु ही शरीर हो। जैसे हवा।

५ वनस्पतिकायिक जीव—उन्हें कहते हैं जिनका वनस्पति ही शरीर हो। जैसे—पेड, लता, फल, फूल, जडी, बूटी वगैरह।

प्रश्नावली

१ स्थावर जीव कितने प्रकारके हैं? कौन-कौन हैं? २ वायुकायिक, पृथ्वी कायिक जीव किसे कहते हैं? ३ कमरखका पेड, किसमिसकी लता परवलकी बेल, गोभी सेमके पत्ते किस कायके जीव हैं? ४ मोती, पापड़, रत्न, ओला,

ओस, जड़ी, बूटी, आग, दीपककी लौ ये कौनसे कायके जीव हैं? ५ पृथ्वी-कायिक जीव अजीव कब होता है? एक तालाब में कमलके फूलों पर भौंरे गंज रहे हैं वहां पर कौन सी कायके जीव हैं?

पाचवा पाठ

पाच पाप

हिंसा

१ हिंसा, २ झूठ ३ चोरी ४ कुशील, ५ परिग्रह।

१ हिंसा प्रमाद से अपने व दूसरोंकेप्राणोंकाघात करनेको वा दिल दुखानेको हिंसा कहते हैं। प्रमादसे दिल दुखानेको भाव हिंसा और दश प्राणोंके नाश करनेको द्रव्य हिंसा कहते हैं। इस पापके करनेवाले को हिंसक कहते हैं।

"पर जीवन को दुख मत देव, दया धरम पर मन रख लेव॥"

राजा वसु एक ही बार झूठ बोलनमें नरक गया

२ झूठ जिस बात को जैसा देखाहो, सुना हो, जिस चीजको जहाँ रक्खी देखी हो, उसको वैसी न बतलाना यह झूठ है। इस पापके करनेवालेको झूठा दगाबाज कहते हैं।

"कर्कश वचन कबहु मत बोल, सांच वचन से मनको खोल॥"

चोरी

३ चोरी—बिना दिये हुए किसी की गिरी, पडी, रक्खी या भूली हुई चीजको लेना, यह चोरी है। खुद लेकर दूसरोंको देना यह भी चोरी है। इस पापके करनेवाले को चोर तस्कर कहते हैं।

"स्वामी की आज्ञा बिन कोय। चीज गहै सो चोरी होय॥"

४ कुशील-पराई स्त्रीके साथ रमनेको कुशील कहते हैं। इस पापके करनेवाले व्यभिचारी, लम्पट आदि नामोंसे पुकारे जाते हैं।

कुशील का फल

"परदारा से डरते रहो। इसका संग कभी मत गहो॥"

परिग्रह

५ परिग्रह—धन, धान, दासी, दास, सोना, चांदी, घर गाय, बैल, हाथी, इत्यादि सांसारिक चीजोंसे प्रेम रखन

और इन्हींके जोडने में अधिक परिश्रम करना परिग्रह है। इस पापके करनेवालेको लोभी, बहुधंधी, कजूस कहते हैं।

प्रश्नावली

१ पाप कितने हैं? २ सबसे बड़ा पाप कौन सा है? ३ हिंसा, परिग्रह, झूठ किसे कहते हैं? एक लड़का अपने साथवालेकी पुस्तक बिना पूछे घर ले गया तो उसने कौनसा पाप किया? ५ दान न देना परिग्रहसे चाह रखना, बेमतलबकी चीजें इकट्ठी करनेसे कौनसा पाप लगेगा? सत्यवादी चोरी कर सकता या नहीं? ७ हिंसा पापके छोड़नेसे कौन-कौनसे पाप छूट जायेंगे? ८ पापोंके ठट्ठे क्या हैं? अगर मुनि महाराज ईर्यापथ पूर्वक चल रहे हों और कोई कीड़ी उनके पैरोंके नीचे दब जाय तो हिंसा लगेगी या नहीं? मन्दिर बनवाने में हिंसा है या नहीं? स्वय फाँसी लगानेसे हिंसाका पाप लगता है या नहीं? दूसरोंके लिये झूठ बोलनेसे पाप लगेगा या नहीं?

छठवा पाठ

कषाय

जिसके द्वारा आत्माके सद्गुणोंका घात हो अर्थात् जो आत्माको कषे, दुख देवे वह कषाय है। कषाय जीवको नाना प्रकार दुख देती है।

कषाय चार प्रकारकी है—क्रोध, मान, माया, लोभ।

क्रोध

गुस्सेको कहते हैं। जिस तरह आपसमें बात चीत होते २ गुस्सा आया और मार पीट हो गई:—

३ देवगति—उर्द्धलोकमें सोलह स्वर्ग हैं। पुण्य करके ही जीव इनमें जाता है और नाना प्रकार के सुख पाता है। जब कोई भी जीव मर कर इस गति मे जन्म लेता है तो उसे देवगतिवाला जीव कहते है। देवोंके चार भेद हैं—भवनवासी, व्यतर, ज्योतिषी, कल्पवासी।

४ नरकगति—अधोलोकमें सात पृथ्वी हैं। पाप करके ही जीव उसम जाता है। नाना प्रकार के दुख पाता है। पानी की एक बूद और अन्नका एक दाना भी नहीं मिलता है। वहां की पृथ्वीके छूनेसे ही बडा कष्ट होता है। जब कोई जीव मरकर इनमे जन्म ले तो उसको नरक गतिवाला कहते हैं। नारकी कभी भी मरकर देव नहीं होता है।

प्रश्नावली

१—गति कितनी हैं? उनके नाम कहो। तुम कौन गतिके जीव हो?

२—कौवा, चील, बांस, घास, औरत नारकी, देवांगना मनुष्य का बच्चा, कुत्ते का बच्चा—कौन कौन गति के जीव हैं?

३—एक आदमी मरकर देव हो गया तो पहिले कौन सी गति का था और अब कौन गति का है?

४—मनुष्यगति और देवगति में कौनसा अच्छी है? तुम कौन गति चाहते हो? पानी हवा, आग कौन गतिके जीव हैं? तिर्यंच होना अच्छा या नारकी?

॥ समाप्त ॥

सायंकालकी प्रार्थना

हे सर्वज्ञ ! ज्योतिर्मय गुणमणि बालकजन पर करहु दया।
कुमति निशा अंधियारी कारी सत्य ज्ञान-रवि छिपा दिया ॥१॥
क्रोध मान अरु माया तृष्णा यह बटमार फिरे चहु ओर।
लूट रहे जग जीवन को यह देख अविद्या तम का जोर ॥२॥
मारग हमको सूझे नाहीं ज्ञान विना सब अन्ध भये।
घटमें आय विराजो स्वामी बालक जन सब खड़े हुए ॥३॥
सतपथ दर्शक जनमन हर्षक घट घट अन्तरयामी हो।
श्री जिनधर्म हमारा प्यारा इसके तुम ही स्वामी हो ॥४॥
घोर विपत में आन पड़ा हूं मेरा बेड़ा पार करो।
शिक्षा का हो घर घर आदर शिल्प कला सचार करो ॥५॥
मेल मिलाप बढ़ाव हम सब द्वेष भाव की घटाघटी
नहीं सतावें किसी जीव को प्रीतिक्षीर की गटागटी ॥६॥
मात पिता अरु गुरुजन की हम सेवा निश दिन किया करें
स्वारथ तजकर सुख दें परको आशीम सबकी लिया करें ॥७॥
आतम शुद्ध हमारा होवे पापमैल नहिं चढ़े कदा
विद्या की हो उन्नति हममें धर्म ज्ञान हू बढ़े सदा ॥८॥
दो कर जोरे बालक ठाड़े करें प्रार्थना सुनिये तात
सुख से बीते रैन हमारी जिनमत का हो शीघ्र प्रभात ॥९॥
मात पिता की आज्ञा पालैं गुरु की भक्ति धरैं उर में
रहें सदा हम करतब तत्पर उन्नति कर निज निज पुरमें ॥१०॥

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

सचित्र

शिशुबोध जैनधर्म

तीसरा भाग

प्रकाशक

जिनवाणी प्रचारक कार्यालय

१६१।१, हरीसन रोड, कलकत्ता-७

विषय सूची

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

शिशुबोध जैनधर्म

तीसरा भाग

पहला पाठ

आलोचना पाठ

दोहा—वन्दों पांचों परम गुरु, चौवीसों जिनराज।
करूं शुद्ध आलोचना, शुद्ध करनके काज॥ १॥

चौपाई

सुनिये जिन अर्ज हमारी। हम दोष किये अति भारी॥
तिनकी अब निर्वृत्ति काजा। तुम शरण लही जिनराजा॥ २॥
इक वे ति चउ इन्द्री वा। मन रहित सहित जे जीवा॥
तिनकी नहीं करुणा धारी। निर्दयी ह्वै घात विचारी॥ ३॥
समरम्भ समारम्भ आरम्भ। मन वच तन कीने प्रारम्भ
कृत कारित मोदन करिके। क्रोधादि चतुष्टय धरिके॥ ४॥
शत-आठ जु इन भेदनतें। अघ कीने पर छेदनतें।
तिनकी कहुं कोलौं कहानी। तुम जानत केवलज्ञानी॥ ५॥
विपरीत एकान्त विनय के। संशय अज्ञान कुनय के॥
वश होय घोर अघ कीने। वचतें नहीं जात कहीने॥ ६॥
कुगुरुन की सेवा कीनी। केवल अदया कर भीनी।
या विधि मिथ्यात्व बढ़ायो। चहुं गतिमें दोष उपायो॥ ७॥
हिंसा पुनि झूठ जु चोरी। पर वनितासों दृग जोरी।
आरम्भ परिग्रह भीने। पन पाप जु या विधि कीने॥ ८॥

सपरस रसना घ्राणनको। दृग कान विषय सेवनको।
बहु कर्म किये मनमाने। कछु न्याय अन्याय न जाने ॥ ६॥
फल पञ्च उदम्बर खाये। मधु मद्य मांस चित चाये।
नहीं अष्ट मूल गुण धारे। सेये कुविसन दुख कारे ॥ १०॥
दुइ बीस अभख जिन गाये। सो भी निश दिन भु जाये।
कछु भेदाभेद न पायो। ज्यों त्यों करि उदर भरायो ॥ ११॥
अनन्तानुबन्धी जानो। प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो।
सज्वलन चौकरी गुनिये। सब भेद जु षोडश मुनिये ॥ १२॥
परिहास अरति रति शोक। भय ग्लानि त्रिवेद सयोग।
पनबीस जु भेद भये इम। इनके वश पाप किये हम ॥ १३॥
निद्रा वश शयन करायो। सुपने मधि दोष लगायो।
फिर जागि विषयवन धायो। नाना विधि विष फल खायो ॥१४॥
किये आहार निहार विहारा। इनमें नहीं जतन विचारा।
बिन देखे धरा उठाया। बिन शोधा भोजन खाया ॥ १५॥
तब ही परमाद सतायो। बहुविधि विकलप उपजायो।
कछु सुधिबुधि नाहीं रही है। मिथ्यामति छाय गई है ॥ १६॥
मरजादा तुम ढिग लीनी। ताहूमे दोष जु कीनी।
भिन्न २ अब कैसे कहिये। तुव ज्ञान विषे सब पइये ॥ १७॥
हा। हा। मैं दुष्ट अपराधी। त्रस जीवनको जु विराधी।
थावर की जतन न कीनी। उरमे करुणा नहीं लीनी ॥ १८॥
पृथ्वी बहु खोद कराई। महलादिक जागा चिनाई।
बिन गाल्यो पुनि जल ढोल्यो। पखांते पवन बिलोल्यो ॥१६॥

हा। हा। मैं अदयाचारी। बहु हरित काय जु विदारी।
या मधि जीवनके खन्दा। हम खाये धरि आनन्दा ॥ २० ॥
हा। हा। मैं परमाद वसाई। बिन देखे अगनि जलाई।
ता मध्य जीव जे आये। तेहू परलोक सिधाये ॥ २१ ॥
बीध्यो अनराति पिसायो। ईंधन बिन शोधि जलायो।
झाड़ु ले जागा बुहारी। चींटी आदिक जीव विदारी ॥ २२ ॥
जल छानि जिवानी कीनी। सो हू भू डारि जु दीनी।
नहीं जल थानक पहुंचाई। किरिया बिन पाप उपाई ॥ २३ ॥
जल मल मोरिन गिरवायो। कृमि कुल बहु घात करायो।
नदियन बिच चीर धुवाये। कोसनके जीव मराये ॥ २४ ॥
अन्नादिक शोध कराई। ता मध्य जीव निसराई।
तिनको नहीं जतन करायो। गलियारे धूप डरायो ॥ २५ ॥
पुनि द्रव्य कमावन काजै। बहु आरम्भ हिंसा साजै।
कीये अघ त्रिसनावश भारी। करुणा नहीं रंच विचारी ॥२६॥
इत्यादिक पाप अनन्ता। हम कीने श्री भगवन्ता।
सन्तत चिर काल उपाई। बानीतैं कहिय न जाई ॥ २७ ॥
ताको जु उदय अब आयो। नाना विधि मोहि सतायो।
फल भुंजत जिय दुख पावै। बचतैं कैसे करि गावै ॥ २८ ॥
तुम जानत केवल ज्ञानी। दुख दूर करो शिवथानी।
हम तो तुम शरण लही है। जग तारन बिरद सही है ॥ २९ ॥
इक गांव पति जो होवै। सो भी दुखिया दुख खोवै।
तुम तीन भुवन के स्वामी। दुख मेटो अन्तरजामी ॥ ३० ॥

द्रौपदी को चीर बढ़ायो। सीता प्रति कमल रचायो।
भजन से कीये अकामी। दुख मेटो अन्तरजामी॥३१॥
मेरे अवगुन न चितारो। प्रभु अपनो विरद निहारो।
सब दोष रहित कर स्वामी। दुख मेटहु अन्तरजामी॥३२॥
इन्द्रादिक पदवी न चाहूं। विषयनि में नाहीं लुभाऊं।
रागादिक दोष हरीजै। परमातम निज पद दीजै॥३३॥
दोहा— दोष रहित जिनदेवजी निजपद दीजै मोय।
सब जीवन के सुख बढ़े, आनन्द मंगल होय॥
अनुभव माणिक पारखी, जौहरि आप जिनन्द।
यही सुवर मोहि दीजिये, चरण शरण आनन्द॥

कुछ भावार्थ

समरम्भ, समारम्भ और आरम्भ इन तीनोंको मन वच-काय इ
तीनोंसे गुणने पर नौ हुए। इन नवको, कृत, कारित और अनुमोदनासे
गुणने पर २७ हुए। तथा इनको क्रोध, मान, माया, लोभ ये चतुष्कसे
गुणने पर १०८ भेद हुए। ३×३×३×४=१०८। इन पापारम्भको नष्ट
करनेके लिये माला में भी १०८ दाने हुआ करते है॥ ४॥

मद्य-मांस मधु, पांच उदम्बर फल इनके खानेका त्याग करना आ
मूलगुण हैं। क्योंकि इनमे चलते फिरते त्रस जीव नजर आते हैं।
इसलिये प्रत्येक श्रावकके लिये इनका त्याग कर अष्ट मूलगुण धारण
करना ही श्रेष्ठ है। इनके धारण किये बिना जैनधर्मका पालन करना
व्यर्थ है। तथा जुआ मांस, मदिरा, गणिका, शिकार, चोरी, परस्त्री
सेवन ये सप्तव्यसन हैं॥ १॥

आत्माके रत्नको परखनेवाले अनुभवी हे जिनेन्द्र। आप जौहरी हैं। जिस प्रकार एक साधारण जौहरी खोटे खरे रत्नकी परीक्षा शीघ्र कर लेता है, उसी तरह आप भी अनुभवसे आत्माकी परीक्षा कर लेते हैं। मैं यही वरदान मागता हूं कि मैं सदा आपकी शरणमें रहूं।

नोट—भगवानकी दाहिनी ओर बैठकर आलोचना पढनी चाहिये।

प्रश्नावली

(१) आलोचना किसे कहते हैं ? इसको किस समय पढ़ना चाहिये ? इसके पढ़ने से क्या लाभ है ?

(२) 'दुइ बीस अभख जिन गाए' इससे क्या समझते हो ? २५ कषायें कौन सी हैं ? १०८ भेद गिनाओ।

(३) जल छानने की क्या रीति है ?

(४) पांच पाप पांच महाव्रत अष्ट मूलगुण, सप्त व्यसन, पांच मिथ्यात्व इनके केवल नाम लो।

(५) 'हा हा परमाद बसाई' से लेकर "वचनैं कैसे वरि गावें' तक पढ़ो।

(६) आदि और अन्त के दोहे पढ़ो तथा अर्थ भी समझाओ।

(७) आलोचना कब पढ़नी चाहिये और इससे क्या समझते हो ?

(८) समरम्भ समारम्भ, आरम्भ कृत-कारित अनुमोदना, मन, वचन, काय किसे कहते हैं ? सीता द्रौपदी अंजनचोर इनके विषयमें कुछ जानते हो तो बताओ।

(९) जो पद्य तुमको अति प्रिय हो वही पढ़ो।

दूसरा पाठ

जिनेन्द्र गर्भ कल्याणक

(स्वर्गीय पण्डित रूपचन्द्रजी पाण्डे कृत)

पणमिवि पंच परमगुरु, गुरु जिन शासनो।
सकल सिद्धि दातार सु, विघन विनाशनो॥
शारद अरु गुरु गौतम, सुमति प्रकाशनो॥
मंगल कर चउ संघहि, पाप पणासनो॥
पापहिंपणासन गुणहिं गरुवा, दोष अष्टादश—रहिउ।
धरिध्यान करमविनाश केवल, ज्ञान अविचल जिन गहिउ॥
प्रभु पंच कल्याणक विराजित, सकल सुर नर ध्यावहीं।
त्रैलोक्यनाथ सु देव जिनवर, जगत मंगल गावहीं॥ १॥
जाके गरभकल्याणक, धनपति आइयो।
अवधिज्ञान—परवान सु इन्द्र पठाइयो॥
रचि नव बारह जोजन, नयरि सुहावनी।
कनक रयण मणिमंडित, मन्दिर अति बनी॥
अति बनी पौरि पगारि परिखा, सुवन उपवन सोहये।
नरनारि सुन्दर चतुर भेख सु देख जनमन मोहये॥
तहं जनकगृह छहमास प्रथमहिं रतनधारा बरसियो।
पुनि रुचिकवासिनि जननी सेवा करहिं सबविधि हरसियो॥२॥
सुरकुंजरसम कुंजर, धवल धुरंधरो।
केहरि केशरशोभित, नख शिखसुन्दरो॥

कमलाकलश न्हवन, दुइदाम सुहावनी।
रविशशिमण्डलमधुर, मीन जुग पावनी॥
पावनि कनक घट जुगमपूरण, कमलकलित सरोवरो।
कल्लोलमाला कुलित सागर, सिंहपीठ मनोहरो॥
रमणीक अमर विमान फणिपति भुवन रविछवि छाजई।
रुचि रतनराशि दिपत, दहन सु तेजपुंज विराजई॥ ३॥
ये सखि सोलह सुपने सूती सयनमें।
देखे माय मनोहर, पश्चिम रयनमें॥
उठि प्रभात पिय पूछियो, अवधि प्रकाशियो।
त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिह भासियो॥
भासियो फल तिहिं चिंति दम्पति परम आनन्दित भये।
छहमासपरि नवमास पुनि तह, रैन दिन सुखसों गये॥
गर्भावतार महत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भनि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर जगत मंगल गावहीं॥ ४॥

भावार्थ

जब तीर्थंकर भगवान गर्भमें आते हैं, उनके छह मास पहिलेसे लगाकर जन्म तक रत्नोंकी वर्षा होती है। इन्द्र अपने अवधिज्ञानसे यह समाचार जान लेता है और नगरीकी रचना करनेके लिये कुबेरको भेजता है। कुबेर आकर अति शोभायमान उपवन, वन खाई कोटसे युक्त नगरीकी रचना करता है। उस नगरीको देखकर स्त्री-पुरुष खुश होते हैं। देवियां माताकी सेवा करती हैं। रात्रिके पिछले भागमें माता १६ स्वप्न देखती है।
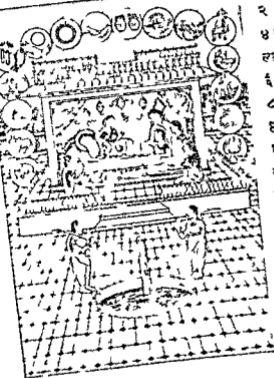
१ ऐरावत हाथी
२ बैल, ३ सिंह
४ स्नान करती हुई
लक्ष्मी, ५ दो माला
६ सूर्य, ७ चन्द्रमा,
८ दो मछली
९ स्वर्ण कलश
१० तालाव, ११
समुद्र, १२ सिंहा-
सन १३ विमान
१४ नागेन्द्रभवन,
१५ रत्नराशि, १६
निधूम अग्नि - ये
१६ स्वप्न देखती
हैं। माता सवेरे
अपनी नित्य-
क्रिया से निवृत्त
होकर अपने पतिके पास जाती है और अपने स्वप्नोंका फल पूछती
है। राजा प्रतिफल कहते हैं कि तुम्हारे गर्भसे त्रिभुवनके नाथ तीर्थंकर
पुत्रका जन्म होगा। इस समाचार को सुनकर माता और
पिता आनन्दित होते हैं। इसी तरह ९ महीना सुखपूर्वक व्यतीत
करते हैं।

प्रश्नावली

(१) मंगल कब पढ़ना चाहिये? इससे क्या लाभ है? (२) माताने स्वप्न कब देखे? नाम लो। पद्य पढ़ो। (३) कितने दिन पहले रत्नोंकी वर्षा होती है? (४) भावार्थ कहो। बनाने वालेका क्या नाम है?

तीसरा पाठ

जन्म कल्याणक

मतिश्रुति अवधि विराजित, जिन जब जनमियो।
तीनलोक भयो छोभित, सुरगन भरमियो॥
कल्पवासिघर घंट, अनाहद बज्जियो।
ज्योतिषघर हरिनाद, सहज गल गज्जियो॥
गज्जियो सहजहिं संख भावन भुवन शब्द सुहावने।
वितरनिलय पटु पटह बज्जहिं कहत महिमा क्यों बने॥
कंपित सुरासन अवधिबल जिनजनम निहचैं जानियो।
धनराज तब गजराज मायामयी निरमय आनियो॥ ५॥
जोजन लाखगयंद, बदन सौ निरमए।
बदन बदन वसु दन्त, दन्त सर संठए॥
सर सर सौ पनवीस, कमलिनी छाजहीं।
कमलिनि कमलिनि कमल, पचीस विराजहीं॥
राजहीं कमलिनि कमल अठोतरसौ मनोहर दल बने।
दल दलहिं अपछर नटहिं नवरस, हाव भाव सुहावने॥

मणि कनककिंकणि वर विचित्र सु अमरमण्डप सोहये।
घन घट चँवर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहये ॥ ६ ॥
तिहिं करिहरि चढ़ि आयउ, सुरपरिवारियो।
पुरहिं प्रदच्छन दै त्रय, जिन-जय कारियो ॥
गुप्त जाय जिन-जननीहिं सुखनिद्रा रची।
मायामयी शिशुराखि तौ जिनआन्यो सची ॥
आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृपति न हूजिये।
तब परम हरषित हृदय हरिने सहस लोचन कीजिये ॥
पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इन्द्र, उछंग धरि प्रभु लीनऊ।
ईशान इन्द्र सु चन्द्र छवि सिर छत्र प्रभुके दीनऊ ॥ ७ ॥
सनतकुमार महेन्द्र, चमर दुइ ढारहीं।
शेष शक्र जयकार, शब्द उच्चारहीं ॥
उच्छवसहित चतुरविधि, सुर हरषित भयो।
जोजन सहस निन्यानवै, गगन उलघि गयो ॥
लघि गये सुरगिर जहां पाडुक वन विचित्र विराजहीं।
पांडुक शिला तहं अर्धचन्द्र समान, मणि छवि छाजहीं ॥
जोजन पचास विशाल दुगुणायाम, वसु ऊंची गनी।
वर अष्ट मंगल-कनक कलशनि सिंहपीठ सुहावनी ॥ ८ ॥
रचि मणिमंडप शोभित, मध्य सिंहासनो।
थाप्यो पूरब मुख तहँ, प्रभु कमलासनो ॥
बाजहिं ताल मृदंग, वेणु वीणा घने।
दुन्दुभि प्रमुख मधुर धुनि, और जु बाजने ॥

वाजने वाजहिं शची सब मिलि, धवल मंगल गावहीं।
पुनि करहिं नृत्य सुरांगना सब, देव, कौतुक धावहीं॥
भरि क्षीरसागर जल जु हाथहि, हाथ सुरगिरि ल्यावहीं।
सौधर्म अरु ईशान इन्द्र सु कलश ले प्रभु न्हावहीं॥ ९॥
वदन-उर अवगाह, कलशगत जानियो।
एक चार वसु जोजन, मान प्रमानियो॥
सहस अठोत्तर कलशा, प्रभुके सिर ढरें।
पुनि शृंगार प्रमुख, आचार सबै करें॥
करि प्रगट प्रभु महिमा महोच्छव, आनि पुनि मातहिं द्यो।
धनपतिहिं सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहि गयो॥
जनमाभिषेक महत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भणि 'रूपचन्द्र' सुदेव जिनवर जगतमङ्गल गावहीं॥१०॥

भावार्थ—तीन ज्ञानसहित भगवानका जन्म होते ही तीनों लोकों में आनन्द होता है। इन्द्र का आसन कम्पायमान होते ही उसे निश्चय हो जाता है कि भगवान का जन्म हो गया। कुबेर ऐरावत हाथी पर सवार हो सपरिवार नगर की तीन प्रदक्षिणा देता है। इन्द्राणी मायामयी बालक रख भगवान को उठा लाती है। इन्द्र भगवान को देखकर तृप्त नहीं होता, तब १००० नेत्रोंसे देखता है। सौधर्म इन्द्र गोदम लेता है, ईशान इन्द्र छत्र लगाता है, तीसरे चौथे स्वर्गके इन्द्र चमर ढोरते हैं, शेष इन्द्र जय जयकार करते हैं।

पश्चात ऐरावत हाथी पर भगवान को आसीन कर मेरु पर्वत पर जो पांडुकशिला है उस पर रत्नजडित सिंहासन पर विराजमान

करते हैं। नाना प्रकार के बाजे बजते हैं, इन्द्राणी मंगल गाती हैं, देवियां नृत्य करती हैं, अन्य देव हाथों हाथ क्षीर-सागर से जल भर लाते और सौधर्म तथा ईशान इन्द्र अभिषेक करते हैं। पश्चात जिन राज को वस्त्र आभूषण पहना कर आनन्द व सबसे वापिस लाते हैं। इन्द्र भगवान को माता की गोदमें देकर कुबेर को वहां नियुक्त करता और आप स्वर्ग को चला जाता है।

प्रश्नावली

(१) भगवान के जन्मसे ही कितने ज्ञान होते हैं? भगवान का जन्म इन्द्रको मालूम पड़ता है? (२) ऐरावत हाथीके विस्तारका पद पढ़ो। इन्द्र पहिले करता है? बालकको बाहर कौन और कैसे लाता है? (३) हाथी पर बिठाता है? मेरुपर क्या होता है? (४) पाण्डुक शिला तथा कलशोंका वर्णन (५) कितने कलशे भगवान पर ढुरते हैं? (६) जलधाराका पद पढ़ो।

चौथा पाठ

अजीव

अजीव द्रव्यके पाच भेद है-(१) पुद्गल (२) धर्म (३) अधर्म (४) आकाश (५) काल। इन्हीमे जीव द्रव्यके मिलानेसे छह द्रव्य हो जाते है।

१—पुद्गल द्रव्य
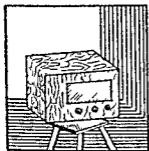
जो रूपी हो वह पुद्गल है अथात जिसमे रूप, रस, गध, वर्ण, स्पर्श पाया जाय वह पुद्गल है। मूलमे पुद्गलके दो भेद हैं—(१) स्थूल—जो आखोंसे दिखाइ पडता है। (२) सूक्ष्म—जो आखों से दिखाई नहीं पडता। पुद्गलके सबसे छोटे हिस्सेको अणु कहते है। अणुके एकसे ज्यादा चार दस, सौ टुकडेको स्कन्ध कहते हैं। शब्द, गन्ध, सूक्ष्म, स्थूल, धूप, गर्मी, अन्धेरा, चादनी सब पुद्गल की अवस्था (पर्याय) है।

२—धर्म द्रव्य

जीव और पुद्गलके चलनेम जो सहायक हो वह धर्म द्रव्य है। यह जीव और पुद्गल को जबरदस्ती धक्का मारकर नहीं चलाता है, किन्तु जब व चलते है तब उदासीन रूपसे सहकारी होता है। जैसे मछलीके चलनेम सहकारी जल है। यह द्रव्य सम्पूर्ण लोकाकाशमे तिलम तैलके माफिक भरा है परन्तु आखासे नहीं दीखता है।
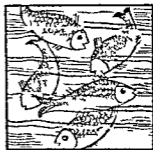
३—अधर्म द्रव्य

जो जीव और पुद्गलोंके ठहरनेमें सहकारी हो, वह अधर्म द्रव्य है। जैसे चलते हुये मुसाफिर को ठहरनेमें सह कारी वृक्ष की छाया है। इसी प्रकार उदासीन रूपसे अधर्म ठहरते हुये जीवों को सहकारी होता है। यह भी सम्पूर्ण लोकमें भरा है और देखनेमें नहीं आता।

४—आकाश द्रव्य

जो सब द्रव्यको ठहरनेके लिये स्थान दे वह आकाश है। इसके दो भेद हैं। (१) लोकाकाश, (२) अलोकाकाश। जिसमें जीवादिक सम्पूर्ण द्रव्य पाये जांय वह लोकाकाश है, जहां केवल आकाश मात्र हो वह अलोकाकाश है।
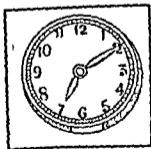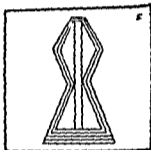
५—काल द्रव्य

जो पदार्थों की पर्याय पलटनेमें सहकारी हो, वह काल है। व्यवहारमें पल, घड़ी, घंटा, दिन, सप्ताह, पक्ष, वर्ष इत्यादि को व्यवहार काल कहते हैं। केवल काल द्रव्य को छोड़कर बाकीके द्रव्य पंचास्तिकाय हैं। काल द्रव्य बहुप्रदेशी नहीं, बल्कि एकप्रदेशी रत्नोंकी राशिके समान है।

धर्म-अधर्मसे पुण्य पाप नहीं समझना चाहिये, नहीं तो फिर हम चल फिर नहीं सकते हैं।

प्रश्नावली

(१) अजीवके कितने भेद हैं ? द्रव्य कितनी और कौन २ हैं ? पचास्तिकाय कौन हैं ? काल बहुप्रदेशी क्यों नहीं है ?

(२) कौन द्रव्य लोकमें पाया जाता है ? अलोकमें क्या कोई द्रव्य है ? सिद्धशिलामें लोक है या नहीं ?

(३) आकाश के भेद लक्षण सहित कहो। आकाश कहां पर नहीं है ? चलना कौन सी द्रव्य से है ?

(४) यदि धर्म अधर्म न हो तो क्या हानि ? धर्म अधर्म को पुण्य पाप मानने में क्या दोष है ?

(५) अणु एवं स्कन्ध में क्या भेद है ?

(६) अन्धेरा, धूप, छाया, शब्द क्या है ?

(७) सजीव द्रव्य कौन-कौन जगह पाया जाता है ?

(८) द्रव्य विषयपर छोटा सा व्याख्यान दो। रूपी द्रव्य कौन-कौन हैं ? रूपीसे क्या समझते हो ?

पाचवा पाठ

पुद्गल के गुण

रूप, रस, गन्ध, स्पर्श—ये पुद्गलके ४ गुण हैं। इन चारोंके २० भेद हैं—रूपके ५, रसके ५, गन्धके २ तथा स्पर्शके ८। ये पुद्गल को छोड़ और किसी भी द्रव्यमें नहीं रहते हैं। ये चारों हमेशा एक साथ रहते हैं। जहां पर एक गुण होगा वहां पर वाकीके सब गुण अवश्य ही पाये जायेंगे। जैसे पके आममें पीला रूप, मीठा रस, अच्छी गन्ध और कोमल स्पर्श है।

(१) रूप—जो चक्षु इन्द्रियके द्वारा जाना जाय यह रूप है। यह पाच प्रकार है—१ नीला, २ पीला, ३ कृष्ण ४ लाल, और ५ श्वेत। जैसे-मोरकी गरदन नीली, सोना और पीतल पीला, कोयला काला, खून लाल, चांदी और दूध सफेद है।

(२) रस—जो रसना इन्द्रियके द्वारा जाना जाय, यह रस है। रस भी पांच प्रकार का होता है—१ तिक्त, २ कडवा, ३ कषायला, ४ आम्ल (खट्टा) और ५ मीठा। जैसे—मिर्चमें तिक्त, नीममें कड़वा आंवलेमें कषायला, नीबूमें खट्टा, गन्ने मे मीठा रस है।

(३) गन्ध—जो घ्राण इन्द्रियसे जाना जाय वह गन्ध है। गन्ध के दो भेद है—सुगन्ध और दुर्गन्ध। गुलाब चमेली के फूलमें सुगन्ध आती है और मिट्टीके तेल मे दुर्गन्ध।

(४) स्पर्श—जो स्पर्शन इन्द्रियसे जाना जाय, वह स्पर्श है। स्पर्श आठ प्रकारका है—१ स्निग्ध, २ रूक्ष, ३ शीत, ४ गर्म ५ मृदु, ६ कर्कश, ७ भारी, ८ हलका। जैसे—घीमे स्निग्ध (चिकना) बालूमे रूक्ष, जलमें ठंडा, अग्निमे उष्ण, मक्खनमे मृदु पत्थरमे कठोर (कर्कश) लोहेमे गुरु (भारी) रूईमें हलका स्पर्श है।

प्रश्नावली

(१) पुद्गलके कितने भेद हैं ? कौन कौन हैं ?
(२) जहा पर रूप होगा वहां रस होगा या नहीं ?
(३) छह द्रव्योंमें कौन कौनसे रूपी हैं ?
(४) किसी एक चीजका नाम लो जिसमें चारों गुण पाये जाते हों।
(५) ये गुण किससे जाने जावगे ?—मधुर, तिक्त, पीत, शीत कटु मृदु।
(६) वायुमें कैसा स्पर्श है ? धूप, चांदनी अन्धेरामें कैसा रूप है ?

(७) रूप और रसमें क्या भेद है ? बिना रूप, रस, गंध स्पर्श वाली चीजका नाम लो। (८) इन चीजोंमें कौन २ गुण हैं—पत्थर, तांबा अंगूर लकड़ी, तिनका, ओला, इतर दही, मट्ठा, नीबू आँवला ?

छठवा पाठ

आठ कर्म

आत्माके ज्ञानादिक गुणोंको प्रकट न होने दे, अथात् आत्मा का असली स्वभाव जो ज्ञानादिक है उसको ढक लेते हों, उनको कर्म कहते हैं। जैसे बहुत-सी धूल (सूखी मिट्टी) उड़कर सूर्यके प्रकाशको ढक देती है, उसी प्रकार कर्म भी आत्मापर व्याप्त होकर ज्ञान गुणको ढक देते हैं। जब आत्मामें क्रोधादि कषायें उत्पन्न होती हैं उसी समय ये कर्म परमाणु जो कि सब लोकाकाशमें व्याप्त हैं, आत्मामें लगते हैं। कषायादिके सम्बन्धसे इनमें अनुभाग (फल) देनेकी शक्ति पैदा होती है। कर्म दो प्रकार के हैं—१ घातिया, २ अघातिया।

घातिया कर्मके ४ भेद ज्ञानावरणी दर्शनावरणी, मोहनीय, अन्तराय। अघातिया कर्मके ४ भेद— आयु, नाम, गोत्र, वेदनीय।
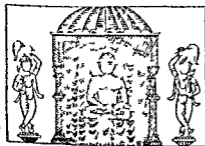
१—ज्ञानावरणी—जो आत्माके ज्ञान गुणको आवरण करे (ज्ञानआवरणी)। जैसे एक जिन प्रतिमा पर परदा डाल दिया जाय तो प्रतिमाके दर्शन नहीं होते इसी प्रकार ज्ञानावरणी कर्म आत्माके ज्ञान गुण

को प्रगट नहीं होने देता—जैसे हीरालाल दिनभर ग्रंथ याद करता है, परन्तु उसको याद नहीं होता है। तो समझना चाहिये कि हीरालाल को ज्ञानावरणी कर्मके उदयसे याद नहीं होता है। सच्चे ज्ञानी की निन्दा करनी, ज्ञानके कार्योंमें विघ्न डालना (पाठशाला बन्द कर देना अध्यापकको हटा देना) ज्ञानको छिपाना, ज्ञानवान पुरुषोंमें ईर्षा द्वेष रखना, खोटा उपदेश देना, पढ़नेमें आलस्य करना किसीकी पुस्तक बिना अनुमतिके छपवा देना, इत्यादि कारणोंसे ज्ञानावरणी कर्म बंधता है। इसी का उल्टा करने से ज्ञानका प्रकाश होता है। इसकी उत्कृष्ट स्थिति ३० कोडाकोडी जघन्य अन्तर्मुहूर्त की है।

२—*दर्शनावरणी*—जो आत्माके अनन्त दर्शन गुणको ढके, प्रगट न होने दे वह दर्शनावरणी कर्म है। जैसे एक राजाका पहरेदार राजद्वार पर खड़ा है, किसी को भी राजा के दर्शन नहीं होने देता है बाहर ही मना कर देता है, उसी प्रकार दर्शनावरणी कर्म आत्माके दर्शन के गुणको ढक देता है। जैसे हीरालाल मन्दिरमें दर्शनको गया परन्तु ताला लगा पाया। क्योंकि हीरालालके दर्शनावरणी कर्मका उदय है। दिनमें सोना, दूसरोंकी आंख फोड़ना, देखनेमें विघ्न डालना, दूसरोंको
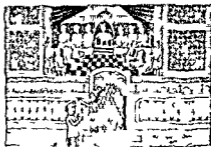
न बताना, इष्टिका घमण्ड करना, मुनियोंको देखकर ग्लानि करना, धर्मात्माको दोष लगाना, इससे दर्शनावरणी कर्म बधता है। उत्कृष्ट स्थिति ३० कोडा-कोडी, जघन्य अन्तर्मुहूर्तकी है।

३—वेदनीय—जो आत्माको दु ख सुख दे। इस कर्मके उदयसे जीवों का उन्हीं चीजोंमें मबध होता है जिसमें यह ससारी जीव दु ख सुख का अनुभव करता है।

जैसे एक क्षत्रीने शहद लपेटी तलवारको चाटा, चाटनेसे शहदतो मीठा लगा, साथमें जीभ भी कट गई, सो दु ख हुआ। इसी प्रकार यह वेद-नीय कर्म सुख दु ख दोनों देता है। सूरजमल रसगुल्ला खा रहा था बर्रने काट खाया, रसगुल्लातो मीठा होनेसे सुख हुआ, बर्रके काट खानेसे दुख हुआ। इसके दो भेद हैं-१ जो सुख दवे वह साता वेदनीय, २ जो दुख पैदा करे वह असाता वेदनीय कर्म है। दु ख करना, घटे जोर से रोना, चिल्लाना, मारना, पीटना, इनका दु ख करना, दूसरोंसेकराना इससे असाता वेदनीय कर्मका बन्ध होता है। जीवों पर दया, व्रतिया पर विशेष दया करना, दान देना, रागपूर्वक सयम पालना, योगका निग्रह करना, क्षमा धारण, लोभ नहीं करना, ऐसा करनेसे साता वेदनीय कर्मका बन्ध होता है। उत्कृष्ट स्थिति ३० कोडा कोडा जघन्य १२ मुहूर्त की है।

४—मोहनीयकर्म—जिसके उदय से यह जीव अपने आत्मीय स्वभावको छोड़कर अन्य सांसारिक वस्तुओंमें मोहको प्राप्त हो जाय। जैसे—शराब पीनेवाला, शराब पीकर अपने आपको भूल जाता है, उसको अपने हित अहित, भले बुरेका जरा भी ख्याल नहीं रहता है, न अपने भाई बहिन, स्त्री, पुत्रादिकको पहचान सकता है, उसी प्रकार इस मोहनीय कर्मके उदयसे इस जीवको अपने भले बुरेका कुछ भी ज्ञान नहीं रहता है और भले बुरे कामोंमें डरता भी नहीं है। क्रोधादि कषायें भी मोहनीय कर्मके उदयसे होती हैं।

सच्चादेव, शास्त्र, गुरु तथा धर्ममें दोष लगाना, केवलीकी निन्दा करना, क्रोध, मान, माया, लोभ और हिंसादि करनेसे मोहनीय कर्मबंधता है। उत्कृष्ट स्थिति कोड़ा कोडी सागरकी है। जघन्य अन्तमुहूर्तकी है।

५—आयुकर्म—जिसके द्वारा आत्माको नरक तिर्यंच, देव, मनुष्य किसी भी एकके शरीरमें रुका रहना पड़े। इस कर्मके उदयसे यह जीव इससंसार में ८४ लाख योनियों म
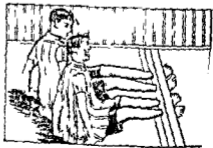
भ्रमण करता हुआ नाना प्रकारके दुःख उठाता है। जैसे एक मनुष्यका पैर एक काठमें डाल दिया है तो यह काठ उस मनुष्यको उसी जगह रोके है, दूसरी जगह नहीं जाने देता है। इसी प्रकार यह आयुकर्म इस जीवको चारों आयुमेंसे किसी एक आयुमें रोक देता है। जबतक आयु रहेगी तबतक उसी शरीर में रहना पड़ेगा। जैसे गायका जीव तिर्यंच शरीरमें, देवका जीव देव शरीरमें, हीराका जीव मनुष्य शरीरमें, तो समझना चाहिये कि हीराके मनुष्यायु, गायके तिर्यंचायु और देवको देवायुका उदय है। बहुत आरम्भ परिग्रह करने, हिंसा झूठ आदि पाप करनेसे जीव नरकमें जाता है। छल कपट करनेसे तिर्यंच होता है। थोड़ा आरंभ परिग्रह रखनेसे मनुष्य होता है। व्रत उपवास करनेसे शांतिपूर्वक भूख प्यासका दुःख सहने से, अकाम निर्जरासे, बाल तपसे देव होता है। उत्कृष्ट स्थिति ३३ सागर, जघन्य अन्तर्मुहूर्तकी है।

६—नामकर्म—उसे कहते हैं जो इस आत्माको नाना आकारका बनाव अर्थात् नाना नाम देव। जैसे—एक चित्रकार नाना प्रकारके चित्र बनाता है कोई स्त्रीका, पुरुषका, गायका, हाथीका, किसीका मुंह गोल, हाथ लम्बा, किसी का हाथ छोटा, किसी की नाक लम्बी, कोई को अच्छा कोई को बुरा बनाता है। उसी प्रकार यह नामकर्म भी इस जीवको कभी सुन्दर

कभी कुरूप, कभी बड़ा दांतवाला, कभी चपटी नाकवाला, कभी अच्छे स्वरूप वाला, कभी बौना, कभी कुबड़ा, इत्यादि नाना रूपमें परिणत करता है। हमारे शरीरकी सब रचना नाम-कर्मके द्वारा की गयी है मन वचन कायको सरल रखना, धर्मसे प्रीति करना, धर्मात्मा देख खुश होना, इत्यादि कार्यसे शुभ नामकर्मका बन्ध होता है घमण्ड करना, कुदेवोंकी पूजना, दुखी करना, दूसरोंकी नकल करना लड़ाइ झगड़ा करना, इत्यादि कार्योंसे अशुभ नामकर्म का बन्ध होता है। उत्कृष्ट स्थिति २१ कोड़ाकोड़ी सागर, जघन्य ८ मुहूर्तकी है।

७—गोत्रकर्म—

गोत्रकर्म उसे कहते हैं जो जीव को ऊंचा नीचा बनावे।—जैसे कुम्भकार छोटे बड़े सभी तरहके बर्त्तन बनाता है, उसी प्रकार यह गोत्रकर्म भी इस जीवको ऊंचा नीचा कुलमें पैदा करता है। जिस जीवके ऊंच गोत्रका उदय होता है वह लोकपूज्य चरित्रवान श्रेष्ठ कुलमें पैदा होता है। जैसे—जैन कुल, ब्राह्मण कुल। नीच गोत्र उदय होनेसे खोटे चरित्रवाला लोकनिंद्य कुलमें पैदा होता है। जो हिंसादि पांच पापका सेवन तथा सप्तव्यसन और अभक्ष्यादिक भक्षण करता है। अपनी प्रशंसा दूसरोंकी निन्दा, अच्छे गुणोंको छिपाना दोषोंको प्रगट करना देव, शास्त्र, गुरुका अविनय करनेसे नीच गोत्र बंधता है। नीच गोत्रके उल्टे अर्थात् अपनी निन्दा, दूसरोंकी प्रशंसा, दोषोंको छिपाना, गुणोंको

प्रगट करना, देव शास्त्र और गुरुका विनय करनेसे ऊंच गोत्रकर्मका बन्ध होता है। उत्कृष्ट स्थिति २० कोडाकोडी, जघन्य ८ मुहूर्तकी है।

८—अन्तराय कर्म—

जिस कर्मके उदयसे किसी शुभ कार्यमें विघ्न आ जाय अथवा जो कार्योंमें विघ्न डाले वह अन्तराय कर्म है। जैसे किसी राजाने एक विद्यार्थी को ७५) रुपया देनेको कहा, परन्तु खजाचीने कुछ टालटाली करके रुपया नहीं दिया। विद्यार्थीके रुपया न देनेमें खजाची विघ्नरूप हो गया। इसी प्रकार यह अन्तराय कर्म कार्योंमें विघ्न डालता है। एकाएक थालीमें मक्खी गिर पडी तो श्रीलाल का रोटी खाना रुक गया यह श्रीलाल के अन्तराय कर्मका उदय है।

दान न देना, लाभ न होने देना, अपने आधीन नौकर चाकरोंको धर्म सेवन न करने देना, लडकोंको विद्या न पढाना इत्यादि कार्यों से अन्तराय कर्म बंधता है। उत्कृष्ट स्थिति ३० कोडाकोडी सागर, और जघन्य अन्तर्मुहूर्तकी है।

प्रश्नावली

(१) कर्म किसे कहते हैं? वे कितने हैं? चौथे छट्ठे, आठवें कर्मका नाम लो। घातिया अघातिया से क्या समझते हो?

(२) एक दान कैसे होता है? सबसे बुरा कर्म कौन है? तुम्हारे किस कर्म का उदय है?

(३) साता वेदनीय दर्शनावरण उच्चगोत्र, तथा अन्तराय कर्म के बंध के कारण कहो। असाता वेदनीय, ज्ञानावरणी मोहनीय, नाम, तथा कर्म जीवका क्या बिगाड़ता है ? लक्षण कहो।

(४) तुमको मनुष्य किसने बनाया तथा हाथ पांव नाक किसने बनाये ?

(५) नीचेके वाक्योंमें किस किस कर्मका उदय है ?

[क] मोहन सदा रोगी और दुखी रहता है।

[ख] महादेव एक एक पैसेको मरता है।

[ग] भूरामलको रसगुल्लेकी बहुत शौक है।

[घ] सूरजमल दिन भर सोता है।

[ङ] फूलचन्द कैदमें पड़ा दुःख भोग रहा है।

(६) नीचेके वाक्योंमें किस किस कर्मका बंध हुआ ?

[क] एक मन्त्रीने पाठशाला बंद कर दी और अध्यापकको हटा दिया

[ख] सोहन बड़ा घमंडी है। उसने सत्यवक्ता पंडितका अनादर किया

[ग] हीरालाने परीक्षामें पास न होनेपर बड़ा रुदन किया।

[घ] मोतीने धर्मात्मा की बुराई की, गरीबका सिर फोड़ दिया।

[ङ] गजाधरने गौरीशंकरकी आँख फोड़ दी और किताब फाड़ दी।

[च] एक शराबीने शराब पीकर सबको गाली दी।

(७) नीचेके वाक्य शुद्ध करो —

[क] गोविंदके अन्तराय कर्मका उदय है इससे वह जन्मसे अंधा है।

[ख] बंशीने एक कसाईको जीव वध करनेके लिए तलवार दी तो उसके दर्शनावरणी कर्मका बंध हुआ।

[ग] रामसूर्तिका शरीर कैसा सुन्दर है इसके ज्ञानावरणी कर्म का उदय हुआ।

(८) आठों कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति कहो। नाम गोत्रसे क्या समझते हो ?

(९) पाठशाला खोलना दान देना औषधालय खोलना गरीबोंकी सहायता करना—किस कर्मका आस्रव होगा ?

सातवा पाठ

सच्चा देव, शास्त्र, गुरु, धर्म

सच्चा देव

वीतरागी, सर्वज्ञ एवं हितोपदेशीको सच्चा देव कहते हैं। इन तीनके बिना सच्चा देव नहीं हो सकता।

वीतरागी

जिसके नीचे लिखे हुए १८ दोष न हों वही वीतरागी है। इनमेंसे अगर एक भी दोष होगा तो वह वीतरागी नहीं होगा, किन्तु सरागी होगा। क्षुधा (भूख) तृषा (प्यास), निद्रा, जन्म, मरण, बुढापा, रोग, गर्व (घमंड) भय, राग, द्वेष, मोह, चिन्ता, रति, अरति खेद, स्वेद (पसीना), आश्चर्य—ये अठारह दोषोंमें एक भी न हो वही वीतरागी है।

सर्वज्ञ

जो भूत, वर्तमान, भविष्यमें होनेवाले समस्त पदार्थोंको तथा उनकी पर्यायोंको हस्तरेखाकी तरह जाने उनको सर्वज्ञ कहते हैं। इनके ज्ञानके बाहर कोई भी पदार्थ नहीं है, ये संसार की समस्त वस्तुओंको जानते हैं॥ २॥

हितोपदेशी

जो बिना किसी स्वार्थ, बिना उपकारके सम्पूर्ण जीवोंमें हितका कल्याणकारी उपदेश देवे, उसमें किसी प्रकार छल कपट वगैरह नहीं हो वह हितोपदेशी है॥ ३॥

सच्चा शास्त्र

जो सच्चे देवके द्वारा कहा गया हो, वादी प्रतिवादी द्वारा जिसका खण्डन न हो सके, पूर्वापर विरोध रहित हो, जिसका कल्याणकारी उपदेश हो, जिसके सुनने, सुनाने पढ़ने, पढ़ानेसे जीवोंका कल्याण हो वही सच्चा शास्त्र है। इनको जिनवाणी माता, आगम, सरस्वती आदि संज्ञा रखते हैं ॥४॥

सच्चा गुरु

जो विषयोंकी आशासे रहित हों, पांचो इन्द्रियोंके विषयोंमेंसे एककी भी इच्छा न रखते हो, आरम्भ परिग्रहसे रहित ज्ञान ध्यान तप में लवलीन हों, पढ़ते पढ़ाते तथा आत्मानुभव ही किया करते हैं, नग्न निर्ग्रन्थ रहते हैं—उनको सच्चा गुरु कहते हैं। जो ऋषि, यति, मुनि भिक्षु, तपस्वी आदि नामोंसे कहलाते हैं ॥५॥

सच्चा धर्म

जो जन्म मरणके दुःखोंसे छुड़ाकर उत्तम मोक्ष सुख प्राप्त करावे प्राणीकी हिंसासे रहित हो, दया सहित हो, परोपकारी हो। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, एवं सम्यक्चारित्रको भी सच्चा धर्म कहते हैं ॥६॥

प्रश्नावली

(१) सच्चे देवोंमें कौन कौन गुण चाहिये ? आपके द्वारा माने गये देव हैं या नहीं, नहीं तो क्यों ? जिसमें सोलह दोष तो न हों, पर दो दोष हों, वह सच्चा देव है या नहीं ?

(२) वीतरागी हितोपदेशी किसे कहते हैं ? इन दोनोंमें क्या भेद है ? वीतरागी हितोपदेशी होगा या नहीं ?

(३) सच्चे गुरु धर्मका स्वरूप कहो। पाठशालाके गुरु सच्चे गुरु हैं या नहीं?

(४) एक देवके पास एक शस्त्र व एक स्त्री है। शस्त्रसे जीव हिंसा करना है। शास्त्रमें भी एक जगह जीव हिंसादि पापोंका निषेध है, दूसरी जगह उनको सेवन करना लिखा है। स्त्रीमें विषय सेवन करना है। एक गुरुके पास सवारीका घोड़ा है जहा पर जाता है वहांपर अपने पैर पुजाता है भेंट लेकर भोजन करता है—तो ये देव एवं गुरु सच्चे हैं या नहीं?

(५) तुमको कौनसे गुरु पसन्द हैं—निर्ग्रन्थ या सग्रन्थ?

(६) अन्य मतके रामायण महाभारत, उपन्यास जैनमित्र जैन गजट अखबारके ग्रन्थ ये सच्चे शास्त्र हैं या नहीं?

आठवा पाठ

रत्नत्रय

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्रको रत्नत्रय कहते हैं। रत्नत्रय ही मोक्षका मार्ग तथा मोक्ष प्राप्तिका उपाय है।

सम्यग्दर्शन

पूर्वके पाठमें कहे गये सच्चे देव, शास्त्र, गुरु एवं धर्मका श्रद्धान विश्वास करना ही सम्यग्दर्शन है। सम्यग्दर्शन धर्मरूपी पेड़की जड़ है। जिन्हें सम्यग्दर्शन प्राप्त हो जाता है वे संसार परिभ्रमणसे निकल जाते हैं। इसके बिना संयम, जप तप, धर्म कर्म आदि व्यर्थ होते हैं। सम्यग्दर्शनसे युक्त जीव मरकर तिर्यंच गति, स्त्री योनि, नपुंसकता, नीचकुल, विकलायु एवं दरिद्रताको प्राप्त नहीं होता है। अगर

नरकमें भी जाय तो पहिले नरकके पहिले पाथडेमें ८४ हजार वर्षकी आयुका धारक होता है। नीचेके नरकोंमें नहीं जाता है ॥१॥

सम्यक्ज्ञान

संशय, विपर्यय अध्यवसायसे मुक्त, पदार्थ को यथारूप जानना, कुछ भी न्यूनाधिक नहीं जानना ही सम्यक्ज्ञान है। सम्यग्दर्शनके होनेपर जो कुज्ञान था वही सुज्ञान कहलाता है। सम्यग्दर्शन सम्यक्ज्ञानका कारण है। सत्य विश्वासके विना सम्यक्ज्ञान नहीं हो सकता है। सम्यक्ज्ञानसे ही केवलज्ञान उत्पन्न होता है। इसलिये पढ़ने पढ़ाने शास्त्र स्वाध्याय सुनने सुनाने तथा वार-वार मनन करनेसे ही सम्यक्ज्ञानकी प्राप्ति होती है। सम्यक्ज्ञानीकी महिमा अचिंत्य है जो करोड़ों वर्षों तक तप करके भी कर्मों का नहीं खपा सकते हैं उनको सम्यक्ज्ञानी एक क्षणमें नष्ट कर देता है। इसीलिये सम्यक्ज्ञानको कोटि उपाय करके भी प्राप्त करना चाहिये।

सम्यक्चारित्र

हिंसा, असत्य, चोरी, कुशील और परिग्रह तथा कषाय वगैरहमें लिप्त होकर प्राणियोंको संसार-सागरमें भ्रमण करना पड़ता है। उससे विरक्त होनेका ही नाम सम्यक्चारित्र है। सम्यग्दर्शन और सम्यक्ज्ञान प्राप्त करनेके बाद संसारके पदार्थोंसे ऊपरसे राग, द्वेष घटानेके लिये सम्यक्चारित्र धारण करना जरूरी है।

प्रश्नावली

(१) रत्नत्रय किसको कहते हैं? (२) सम्यग्दर्शन वाला मरकर कहाँ नहीं जाता है? (३) सम्यग्ज्ञान किसे कहते हैं? (४) देव शास्त्र गुरुका कैसा श्रद्धान करनेसे सम्यग्दर्शन होता है? (५) सम्यक्चारित्र किसे कहते हैं? बिना सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञानके सम्यक्चारित्र होगा या नहीं?

(६) दूधको चूनेका पानी, पीतलको सोना—इस प्रकारका ज्ञान सम्यग्ज्ञान है या नहीं?

(७) एक मनुष्यको सम्यग्ज्ञान हो गया परन्तु अभी सम्यग्दर्शन नहीं हुआ है—हमारा कहना सच है या झूठ? यदि नहीं, तो क्यों नहीं?

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

सचित्र

शिशुबोध जैनधर्म

चौथा भाग

जिनवाणी प्रचारक कार्यालय
१६१।१, हरीसन रोड,
कलकत्ता-७

आठ आना

विपय-सूची

श्री वीतरागाय नमः ।

शिशुबोध जैन-धर्म ।

चतुर्थ भाग

प्रथम पाठ

पूजा देव शास्त्र गुरु ।

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः (यहाँ पुष्पांजलि चढ़ाना चाहिये)

यहां चार २ मंगलपद उत्तमपद और शरणपद इस प्रकार बोल—

चत्तारि मंगलं—अरिहंता मंगलं, सिद्धा मङ्गलं, साहू मङ्गलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा—अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारिसरणं पवज्जामि—अरिहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पवज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा ।

(ॐ पुष्पांजलिं क्षिपेत् कहकर पुष्प चढ़ावें)

नोट—पूजन करने से पहिले स्नान करके उज्ज्वल वस्त्र पहिन कर तीसरे भागमें से मंगल पढ़ते हुए भगवानका न्हवन (अभिषेक) करें। पूजा की सामग्री शुद्ध होनी चाहिये।

अपवित्र पवित्रो वा सुस्थितो दु स्थितोऽपि वा ।
ध्यायेत्पचनमस्कार सर्व्वपापै प्रमुच्यते ॥ १ ॥
अपवित्र पवित्रो वा सर्वावस्था गतोऽपि वा ।
य स्मरेत्परमात्मान स वाह्याभ्यन्तरे शुचि ॥ २ ॥
अपराजितमन्त्रोऽय सर्व्वविघ्नविनाशन ।
मङ्गलेषु च सर्व्वेषु प्रथम मगल मत ॥ ३ ॥
एसो पञ्च णमोयारो सव्वपावप्पणासणो ।
मगलाण च सव्वेसि पढम होइ मगल ॥ ४ ॥
अर्हमित्यक्षर ब्रह्मवाचक परमेष्ठिन ।
सिद्धचक्रस्य सद्बीज सर्वत प्रणमाम्यहम् ॥ ५ ॥
कर्माष्टकविनिर्मुक्त, मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् ।
सम्यक्त्वादिगुणोपेत, सिद्धचक्र नमाम्यहम् ॥ ६ ॥
विघ्नौघा प्रलय यान्ति शाकिनीभूतपन्नगा ।
विष निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥ ७ ॥

(ॐ पुष्पाजलि क्षिपामि कहकर पुष्प चढावें)

यहां अवकाश हो तो पूरा सहस्र नाम पढकर प्रत्येक शतकके बाद अर्घ चढाता जावे। समय न हो तो यह श्लोक पढे —

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकै ।
धवलमगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाम* यजे ॥ ८ ॥

* तत्त्वार्थसूत्रके प्रत्येक अध्यायके बाद 'जिननाम अह' के स्थान पर 'जिनसूत्रमह' कहे। इस प्रकार जिनका अर्घ "चैत्य' 'तीर्थ' चढाना हो 'जिनराजमह' जिनबिम्बमह आदि पढकर ' ॐ" इत्यादि मन्त्रका उच्चारण कर अर्घ चढाना चाहिये ।

अडिल्ल छन्द—प्रथम देव अरहंत सुश्रुत सिद्धान्त जू।
गुरु निरग्रन्थ महन्त मुकतिपुर पथ जू॥
तीन रतन जगमाहिं सु ये भवि ध्याइये।*
तिनकी भक्ति प्रसाद परमपद पाइये॥१॥

दोहा—पूजों पद अरहंत के, पूजों गुरुपद सार।
पूजों देवी सरस्वती, नित प्रति अष्ट प्रकार॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु समूह! अत्र अवतर! अवतर!! (संवौषट्)
" " अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ (स्थापनम्)
" " अत्र मम सन्निहित भवभव वषट् (सन्निधीकरणम्)

गीता छन्द—सुरपति उरग नरनाथ तिनकर, बन्दनीक सुपदप्रभा।
अति शोभनीक सुवरण उज्जल, देखछवि मोहत सभा॥
वर नीर क्षीरसमुद्र घट भरि, अग्र तसु बहुविधि नचूं।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूं॥ १॥

दोहा—मलिन वस्तु हर लेत सब, जलस्वभाव मल छीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥ १॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि० स्वाहा।

जे त्रिजगउदरमझार प्राणी, तपत अति दुद्धर खरे।
तिन अहितहरण सुवचन जिनके परम शीतलता भरे॥
तसु भ्रमरलोभित घ्राण पावन सरस चन्दन घसि सचूं।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूं॥२॥

दोहा—चन्दन शीतलता करे, तपत वस्तु परवीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥ २॥

---

* ध्यावहीं—पावहीं तथा ध्यायवे पायवे भी पाठ प्रचलित हैं।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्य संसारतापविनाशनाय चन्दन नि० स्वा० ।

यह भवसमुद्र अपार तारण, के निमित्त सुविधि ठही ।
अतिदृढ़ परमपावन जथारथ, भक्ति वर नौका सही ॥
उज्जल अखण्डित सालितंदुल पुंज धरि त्रयगुण जचू ।
अरहत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचू ॥ ३ ॥

दोहा—तंदुल सालि सुगंधि अति, परम अखण्डित बीन ।
जासों पूजा परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० स्वा० ।

जे विनयवंत सुभव्य उर अंबुज प्रकाशन भान हैं ।
जे एक मुखचारित्र भाषत त्रिजगमांहि प्रधान हैं ॥
लहि कुन्दकमलादिक पहुप, भव भव कुवदन सौं बचू ।
अरहत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचू ॥ ४ ॥

दोहा—विविध भांति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्प नि० स्वाहा ।

अतिसबल मद कंदर्प जाको, क्षुधा उरग अमान है ।
दुस्सह भयानक ताप नाशन को, सुगरुड़ समान है ॥
उत्तम छहों रसयुक्त नित, नैवेद्य कर घतमें पचू ।
अरहत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचू ॥ ५ ॥

दोहा—नानाविधि संयुक्तरस, व्यंजन सरस नवीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्य क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य नि० स्वाहा ।

जे त्रिजगउद्यम नाश कीने, मोहतिमिर महाबली ।

तिहि कर्मघाती ज्ञानदीप, प्रकाश जोतिप्रभावली ॥
इहिभांति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजन मे रच्चू ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रंथ नित पूजा रचूं ॥ ६ ॥

दोहा—स्वपर प्रकाशक जोत अति, दीपक तमकरि हीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥

ओं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीप नि० स्वाहा ।

जो कर्म-ईंधन दहन, अग्निसमूहसम उद्धत लसै ।
वरधूप तास सुगंधिताकरि, सकल परिमलता हंसै ॥
इहभांति धूप चढ़ाय नित, भव ज्वलनमांहि नहीं पचूं ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूं ॥ ७ ॥

दोहा—अग्निमांहि परिमल दहन, चन्दनादि गुण लीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्व० ।

लोचन सुरसना घ्राण उर, उत्साह के करतार हैं ।
मोपै न उपमा जाय वरणी, सकल फल गुणसार हैं ॥
सो फल चढ़ावत अर्थ पूरन, सकल अमृतरस सचूं ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूं ॥ ८ ॥

दोहा—जो प्रधानफल फलविषै, पंचकरण रस लीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्व० ।

जल परम उज्जल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूं ।
वर धूप निर्मल फल विविध, बहुजनमके पातक हरूं ॥

इन्द्रवज्रा ।

सपूजकोंको प्रतिपालकोंको, यतीनकों औ यतिनायकोंको ।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेशको ले, कीजे सुखी हे जिन शांतिको दे ॥ ६ ॥

मन्दाक्रान्ता ।

होवे सारी प्रजाको सुख बलयुत हो धर्मधारी नरेशा ।
होवे वर्षा समैपे तिलभर न रहे व्याधियोंका अंदेशा ॥
होवे चोरी न जारी सुसमय वरतै हो न दुष्काल मारी ।
सारे ही देश धारे जिनवरवृषको जो सदा सौख्यकारी ॥

दोहा—घातिकर्म जिन नाशकर, पायो केवलराज ।
शांति करें ते जगतमें, वृषभादिक जिनराज ॥

मन्दाक्रान्ता ।

शास्त्रोंका हो पठन सुखदा लाभ सत्संगतिका ।
सद्वृत्तोंका सुजस कहके दोष ढांकूं सभीका ॥
बोलूं प्यारे वचन हितके आपका रूप ध्याऊं ।
तौलों सेऊं चरन जिनके मोक्ष जौलों न पाऊं ॥

आर्या

तवपद मेरे हियमें, मम हिय तेरे पुनीत चरणोंमें ।
तबलों लीन रहै प्रभु, जबलों पाया न मुक्तिपद मैंने ॥
अक्षरपदमात्रासे, दूषित जो कुछ कहा गया मुझसे ।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा करि पुनि छुडाहु भवदुखसे ॥
हे जगबंधु जिनेश्वर, पाऊं तव चरणशरण बलिहारी ।
मरणसमाधि सुदुर्लभ, कर्मोंका क्षय सुबोध सुखकारी ॥

(परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

विसर्जन पाठ।

दोहा—विन जाने वा जानके, रही टूट जो कोय।
तुम प्रसादतें परमगुरु, सो सब पूरन होय ॥ १ ॥
पूजनविधि जानूं नहीं, नहिं जानूं आह्वान।
और विसर्जन भी नहीं, क्षमा करो भगवान ॥ २ ॥
मन्त्रहीन धनहीन हूं, क्रियाहीन जिनदेव।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देव चरणकी सेव ॥ ३ ॥
आये जो जो देवगण, पूजे भक्ति प्रमान।
ते अब जावहु कृपाकर, अपने अपने थान ॥ ४ ॥

—x—

प्रश्नावली

पूजन किस प्रकार करना चाहिये।
शरण पद बोलो।
अक्षत का दोहा, फलका छन्द और विसर्जन पाठ पढ़ो।
जयमालामें क्या क्या वर्णन है ?

द्वितीय पाठ ।

पंचपरमेष्ठीके मूलगुण ।

परमेष्ठी —जो परम अर्थात् उच्च पदमें स्थित रहते हैं। इनके पांच भेद होते हैं —१ अरहंत, २ सिद्ध, ३ आचार्य, ४ उपाध्याय और ५ सर्वसाधु।

इनमें अरहंतके ४६, सिद्धके ८, आचार्यके ३६, उपाध्यायके [illegible] और सर्वसाधुके २८ इस प्रकार सब मिलाकर १४३ मूलगुण होते [illegible] क्रमसे अलग अलग बताते हैं—

अरहंत ।

ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय इन चार घाति[illegible] कर्मोंको नष्ट करनेवाले, अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख [illegible] अनन्त वीर्य धारण करनेवाले, सात धातुओंसे रहित, परम औदारि[illegible] देह धारण करने वाले और जन्म जरा आदि अठारह दोषसे र[illegible] अरहंत भगवान कहलाते हैं*

दोहा—चौतीसों अतिशय सहित, प्रातिहार्य पुनि आठ ।
अनन्त चतुष्टय गुण सहित, छियालीसों पाठ ॥

अर्थ—३४ अतिशय, (जन्मके १० केवल ज्ञानके १० देवकृत १४) ८ प्रातिहार्य और ४ अनन्त चतुष्टय इस प्रकार ४६ मूलगुण होते हैं।

जन्मके दश अतिशय

अतिशय रूप सुगंध तन, नाहिं पसेव निहार।
प्रियहितवचन अतुल्यबल, रुधिर श्वेत आकार॥

* द्रव्यसंग्रहकी ५० वीं गाथा।

छद्मन सहसर आठ तन, समचतुरस्र सठान।
वज्रवृषभनाराचजुत, ये जनमत दश जान॥

१ अत्यन्त सुन्दर शरीर, २ अति सुगन्धमय शरीर, ३ पसेव रहित शरीर, अथात् ऐसा शरीर जिसमे पसीना न आवे, ४ मलमूत्र रहित शरीर, ५ हितमितप्रियवचन बोलना, ६ अतुल्यबल, ७ दूधके समान सफेद खून, ८ शरीरमे एक हजार आठ लक्षण, ९ समचतुर संस्थान १० वज्रवृषभ नाराच संहनन, ये दश अतिशय अरहत भगवान के जन्मसे ही होते हैं। अर्थात् अरहत भगवानका शरीर जन्मसे ही बड़ा सुन्दर सुडौल होता है। उसमेंसे बड़ी अच्छी सुगध आती है और उसमें न पसीना आता है, न मलमूत्र होता है। उनके शरीरम अतुल्य बल होता है। उनका रक्त सफेद दूधकी तरह होता है। वे सबसे मीठे वचन बोलते हैं। उनके शरीरके हाड वगैरह वज्रके होते हैं और उनमें १००८ लक्षण होते हैं।

केवलज्ञानके दश अतिशय

योजन शत इकमें सुभिख, गगनगमनमुख चार।
नहिं अदया उपसर्ग नहिं, नाहीं कवलाहार॥
सबविद्या ईश्वरपनो, नाहिं बढ़ैं नखकेश।
अनिमिष दृग छायारहित, दशकेवलके वेश॥

१—एक सौ योजनमें सुभिक्षता, अर्थात् जिस स्थानमें केवली हो उससे चारों तरफ सौ सौ योजनमें सुकाल होना, २ आकाशमें गमन, ३ चारों ओर मुखका दीखना, ४ अदया का अभाव, ५ उपसर्ग का न होना। जब अरहत भगवानको केवल ज्ञान हो जाता है तो से जहां भगवान होते हैं उस स्थानसे चारों तरफ सौ २

काल रहता है। पृथ्वीसे ऊपर उनका गमन होता है, देखने वालोंको चारों तरफसे उनका मुख दिखलाई देता है। कोई उनपर उपसर्ग नहीं कर सकता और अदयाका उनमेंसे बिल्कुल अभाव हो जाता है। न आहार लेते हैं, न उनकी पलकें झपकती हैं, न उनके बाल और नाखून बढ़ते हैं,और न उनके शरीरकी परछाई पड़ती है। ४ सम्पूर्ण विद्याओं और शास्त्रों के ज्ञाता हो जाते है। ६ कवलाहार (ग्रासवाला) आहार न लेना, ७ समस्त विद्याओंका स्वामीपना, ८ नखकेशोंका न बढ़ना, ९ नेत्रोंकी पलकें न झपकना, १० शरीरकी छाया न पड़ना, ये दश अतिशय केवल ज्ञान होनेके समय प्रगट होते हैं।

देवकृत चौदह अतिशय

देवरचित हैं चारदश, अर्द्धमागधी भाष।
आपसमाहीं मित्रता, निर्मलदिश आकाश॥
होत फूलफल ऋतु सबै, पृथिवी काँचसमान।
चरण कमल तल कमल है, नभतें जयजयवान॥
मन्द सुगन्ध बयारि पुनि, गंधोदककी वृष्टि।
भूमिविषै कण्टक नहीं, हर्षमयी सब सृष्टि॥
धर्मचक्र आगे रहै, पुनि वसुमंगल सार।
अतिशय श्रीअरहंतके, ये चौंतीस प्रकार॥

१ भगवानकी अर्द्ध मागधी भाषाका होना, २ समस्त जीवोंमें परस्पर मित्रताका होना, ३ दिशाओं का निर्मल होना, ४ आकाशका निर्मल होना, ५ सब ऋतुके फलफूल धान्यादिक का एक ही समय फलना, ६ एक योजन तककी पृथिवीका दर्पणकी तरह निर्मल होना, ७ चलते समय भगवानके चरणकमलोंके तले सुवर्ण कमलका होना,

८ आकाशमें जय जय ध्वनिका होना, ९ मंद सुगंधित पवनका चलना, १० सुगंधमय जल वृष्टिका होना, ११ पवनकुमार देवोंके द्वारा भूमिका कण्टक रहित होना, १२ समस्त जीवोंका आनन्दमय होना, १३ भगवानके आगे धर्मचक्रका चलना, १४ छत्र, चमर, ध्वजा, घण्टा आदि आठ मंगल द्रव्योंका साथ रहना। इस प्रकार सब मिलकर३४ अतिशय अरहंत भगवानके होते हैं। ये अतिशय देवोंके द्वारा होते हैं।

आठ प्रातिहार्य

तरु अशोक के निकट में सिंहासन छविदार।
तीन छत्र सिरपर लसैं भामण्डल पिछवार॥
दिव्यध्वनि मुखतें खिरै, पुष्पवृष्टि सुर होय।
ढारें चौसठि चमर जख, बाजे दुन्दुभि जोय॥

अर्थात्—१ अशोक वृक्षका होना, २ रत्नमय सिंहासन, ३ भगवानके सिरपर तीन छत्रका होना ४ भगवानके पीठके पीछे भामण्डलका होना, ५ भगवानके मुखसे निरक्षरी (बिना अक्षर की) दिव्यध्वनिका होना, ६ देवों के द्वारा फूलोंकी वर्षा होना, ७ यक्ष देवों द्वारा चौसठ चमरों का ढुरना, ८ दुन्दुभि बाजोंका बजना—आठ प्रातिहार्य हैं।

अनन्त चतुष्टय।

ज्ञान अनन्त अनन्त सुख, दरस अनन्त प्रमान।
बल अनन्त अरहंत सो, इष्टदेव पहिचान॥

१ अनन्तदर्शन, २ अनन्त ज्ञान, ३ अनन्त सुख, ४ अनन्त वीर्य ये अनन्त चतुष्टय कहे जाते हैं। इनसे भगवानका ज्ञान, दर्शन सुख तथा बल अनन्त होता है;अर्थात् वह इतना होता है कि जिसकी कोई सीमा

या हट नहीं होती। इस प्रकार ३४ अतिशय, ८ प्रातिहार्य, ४ अनन्त चतुष्टय सब मिलाकर ४६ गुण होते हैं।

अठारह दोष ।

जन्म जरा तिरषा छुधा, विसमय आरत खेद।
रोग शोक मद मोह भय, निद्रा चिन्ता स्वेद ॥
रागद्वेष अरु मरणजुत, ये अष्टादश दोष ।
नाहि होत अरहत के, सो छवि लायक मोष ॥

१ जन्म, २ जरा (बुढ़ापा), ३ तृषा (प्यास), ४ क्षुधा (भूख), ५ विस्मय (आश्चर्य), ६ अरति (पीडा), ७ खेद (दुःख), ८ रोग, ९ शोक, १० मद (अभिमान), ११ मोह (लालच), १२ भय (डर), १३ निद्रा (नींद), १४ चिन्ता, १५स्वेद (पसीना), १६राग, १७ द्वेष और १८ मरण ये १८ दोष अरहत भगवान में नहीं होते हैं।

सिद्ध

सिद्ध उन्हें कहते हैं जो ज्ञानावरणादि आठ कर्मों तथा औदारिक आदि कर्मों से उत्पन्न होने वाले शरीरोंका नष्टकर चुके हैं, लोकाकाश और अलोकाकाशके जानने देखने वाले हैं, पुरुषके आकार हैं और लोकके अग्रभाग सिद्धशिलामें रहते है। (द्रव्यसग्रहकी ५१ वीं गाथा देखिये)।

उनके आठ गुण ये हैं—

सोरठा—समकित, दरसन ज्ञान, अगुरुलघु, अवगाहना ।
सूछम वीरजवान, निरावाध गुण सिद्ध के ॥

१ सम्यक्त्व, २ दर्शन, ३ ज्ञान, ४ अगुरुलघु, ५ अवगाहना, ६ सूक्ष्मत्व, ७ वीर्यत्व, और ८ निराबाधत्व ये आठ गुण, आठ कर्मों के नष्ट होने पर प्रकट होते हैं।

तृतीय पाठ

आचार्य

उन्हें कहते हैं जो दर्शन, ज्ञान वीर्य, चारित्र और तप इन पांच चारोंमें स्वय प्रवृत्त रहते है और अन्य मुनियोंको भी प्रवृत्त कराते । सघके शासक ये ही होते हैं तथा प्रायश्चित्त और दीक्षा ये ही या करते हैं। (द्रव्यसग्रहकी ५२ वीं गाथा देखिये)

द्वादश तप दश धर्मजुत, पाल पचाचार ।
षट् आवश्यक त्रिगुप्ति गुन, आचारज पद सार ॥

अर्थात्—तप १२, धर्म १०, आचार ५, आवश्यक ६, गुप्ति ३ ।

बारह तप

अनशन ऊनोदर करै, व्रतसख्या रस छोर।
विविक्तशयन आसन धरै, काय कलेश सुठोर ॥
प्रायश्चित्त धर विनयजुत, वैयाव्रत स्वाध्याय ।
पुनि उत्सर्ग विचारकै, धरै ध्यान मन लाय ॥

अर्थात्—१ अनशन (भोजनका त्याग करना), २ ऊनोदर (भूख से कम खाना), ३ व्रतपरिसख्यान (भोजनके लिये जाते हुए घर वगैरहका नियम करना), ४ रसपरित्याग (छहों रस या एक दो रस का छोड़ना), ५ विविक्तशय्यासन (एकांत स्थानमे सोना बैठना), ६ कायक्लेश (शरीरको कष्ट देना), ७ प्रायश्चित्त (दोषोंका दड लेना), ८ रत्नत्रय व उनके धारकोंका विनय करना, ९ वैयाव्रत अर्थात् रोगी वृद्ध मुनिकी सेवा करना, १० स्वाध्याय करना (शास्त्र पढ़ना), ११ व्युत्सर्ग (शरीरसे ममत्व छोड़ना) और १२ ध्यान करना ।

छट्ठो कर्मप्रवाद है, सतप्रवाद पहिचान।
अष्टम आतमप्रवाद पुनि, नवमो प्रत्याख्यान॥
विद्यानुवाद पूरव दशम, पूर्वकल्याण महन्त।
प्राणवाद किरियाबहुल, लोकबिन्दु है अन्त॥

१ उत्पादपूर्व, २ अग्रायणीपूर्व, ३ वीर्यानुवादपूर्व, ४ अस्तिनास्ति प्रवादपूर्व, ५ ज्ञानप्रवादपूर्व, ६ कर्मप्रवादपूर्व, ७ सत्यप्रवादपूर्व, ८ आत्मप्रवादपूर्व ९ प्रत्याख्यानपूर्व, १० विद्यानुवादपूर्व, ११ कल्याणवादपूर्व, १२ प्राणानुवादपूर्व, १३ क्रियानुवादपूर्व, १४ लोकबिन्दुपूर्व—ये चौदह पूर्व हैं।

साधु।

साधु उन्हें कहते हैं जो सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान सहित सम्यक्चारित्र का सम्यक्प्रकारसे पालन करते हैं। ये ज्ञानध्यानमें त्वलीन रहते हैं और समस्त प्रकारके परिग्रहोंके त्यागी होते हैं। इनके २८ मूलगुण होते हैं ५ महाव्रत, ५ समिति, पचेन्द्रिय दमन, ६ आवश्यक और शेष ७ गुण

पांच महाव्रत।

हिंसा अनृत तसकरी, अब्रह्म परिग्रह पाय।
मनवचनतैं त्यागवो पंच महाव्रत थाय॥

१ अहिंसा महाव्रत, २ सत्य महाव्रत, ३ अचौर्य महाव्रत, ४ ब्रह्मचर्य महाव्रत, ५ परिग्रहत्याग महाव्रत।

पंच समिति।

ईर्या भाषा एषणा, पुनि क्षेपण आदान।
प्रतिष्ठापनाजुत क्रिया, पांचौ समिति विधान॥

समिति (आलस्यरहित चार हाथ आगे जमीन देख चलना

२ भाषासमिति (हितकारी और परिमित वचन बोलना)

३ एषणासमिति (शुद्ध निर्दोष आहार लेना)

४ आदान निक्षेपन समिति (अपने पास के शास्त्र, पीछी, कमंडलु आदि को भूमि देखकर सावधानी से धरना उठाना)

५ प्रतिष्ठापन समिति [साफ भूमि देखकर जिसमें जीव जन्तु न हो मल मूत्र करना] ।

शेष गुण ।

सपरस, रसना नासिका नयन श्रोत्र का रोध।
षट आवशि मजन तजन, शयन भूमिका शोध ॥
वस्त्रत्याग कचलोंच अरु, लघु भोजन इक बार।
दातन मुख मे ना करें, ठाढे लेहिं अहार ॥

१ स्पर्श, २ रसना, ३ नासिका, ४ चक्षु, ५ श्रोत्र, इन पांच इन्द्रियों का वशमें करना, ६ समता, ७ वन्दना, ८ स्तुति, ९ प्रतिक्रमण १० स्वाध्याय, ११ कायोत्सर्ग, १२ स्नानका त्याग करना, १३ स्वच्छ भूमि पर सोना, १४ वस्त्र त्याग करना, १५ बालो को उखाडना, १६ एक बार थोड़ा भोजन करना, १७ दन्तधावन अर्थात् दातौन न करना १८ खड़े खड़े आहार लेना, इस प्रकार ये १८ मूलगुण सर्व सामान्य मुनियों के होते हैं। मुनिजन इनका पालन करते हैं।

प्रश्नावली

१ परमेष्ठी कितने प्रकारके होते हैं ?

२ अरहन्त परमेष्ठी और सिद्ध परमेष्ठी में क्या अन्तर है ?

३ अरहन्त भगवानका आहार क्या है और किस भाषामें दिव्यध्वनि खिरती है

४ अचौर्य महाव्रत, आदाननिक्षेपण समिति किसे कहते हैं ?

५ सत्य महाव्रत, भाषा समिति, सत्य धर्म और वचन गुप्ति

चतुर्थ पाठ

व्यसन।

व्यसन उन बुरी आदतों को कहते हैं, जिनके कारण आत्मा का स्वरूप प्रकट नहीं हो पाता और मनुष्य उनमें आसक्त होकर नाना प्रकारके कष्ट पाता है। इसके कारण आत्मा का हित कभी नहीं हो सकता। व्यसनी संसारमें निंदनीय समझे जाते हैं। व्यसन सात हैं-

१ जुआ खेलना, २ मांस खाना, ३ मदिरा पीना, ४ वेश्या गमन करना, ५ शिकार खेलना, ६ चोरी करना, और ७ परस्त्री सेवन करना।

जुआ खेलना—रुपया पैसा कौड़ी वगरह से दाऊ लगाकर हार जीतका ख्याल रखकर खेलना जुआ है। खेलनेवाला को जुआरी कहते हैं। जुआरी लोग निर्दयी झूठे और चोर हुआ करते हैं। इन्हें आदर और अनादर का ध्यान नहीं रहता। कुटुम्बी और दूसरे लोग इनकी निन्दा करते हैं। जुआरी दरिद्र हो जाते हैं। देखो, पांडवों ने जुआ खेलकर अपनी रानी द्रौपदीको भी दावपर रख दिया और हार गये।

जुआ खेलना अति दुखदायी, पांडवने निज [illegible] हराई।
मङ्गल लोकमें हंसी कराई, तात जुआ न खेलो भाई॥

मांस खाना—प्राणियों को मारकर या मरे हुए प्राणियोंके शरीर को खाना मांस-भक्षण है। मांस खाने से, बहुत दुःख होता

। जिह्वाके लोलुपी निरपराध गूंगे जानवरों पर छुरी चलाते हैं। व निर्दयी नहीं समझते कि जैसे अपने प्राण प्यारे हैं उसी तरह उन पशु-पक्षियोंको भी अपने प्राण प्यारे हैं। ये मांसभक्षी कहलाते हैं।

आमिष भोजन कभी न करना, निन्दनीय है, इससे डरना।
प्राण सभी को प्यारे होते, दया परख प्राणोंको खोते॥

मदिरा पान—शराब, ताडी, गांजा, भांग, चरस आदि नशा करने वाले पदार्थों का खाना पीना मदिरा पान है। लोग इनको मदकी नशेबाज या शराबी कहा करते हैं। ससारके प्राय सभी नरेश मदिरापान करके ज्ञान नष्ट करते हैं। मदिरापान करनेसे मनुष्य अपने हिताहितका कभी ज्ञान नहीं कर पाता। शराबी माता बहिन और स्त्री में कोई भेद नहीं समझता।

यादव कुलका नाश हुआ क्यों, और द्वारिका दाह हुआ क्यों ?
मदिरा पान बहुत दुखदाता, हित अनहित का ज्ञान न पाता॥

वश्या गमण—चटकीली पोशाक और गहने पहिन कर कामियोंव बनानेवाली बाजारू स्त्रियां वश्या है। ये सदा व्यभिचार नाच गाग वगैरहसे पैसा पैदा किया करती है। इनसे किसी तरहका सम्बन्ध रखना, हसी मजाक करना, उनके पास आने जानेसे व्यभिचारव पाप लगता है। वेश्याय अपने चमकीले शरीर पर मोहित कर ध नष्ट कराती है, ऊंच नीच सभीको अग लगाती है। वश्या सबव झूठन है। मूर्ख लोग उसके मोहमें फसकर जीवन नष्टकर लेते है औ गर्मी सुजाक वगैरह आदि बिमारियोंसे दुखी होते है। इनके मोहां फसकर करोड़पति भी दाने २ को तरसने लगते है। बसततिलका वश्य की आठ नाते की कथा भी कितना आश्चय पैदा करती है।

अगर चाहते हो हित अपना, दुर्गति से यदि चाहो बचना ।
गणिका नागिनसे नित डरना, धर्म कमका पालन करना ॥

शिकार खेलना—वन के हिरण, सिंह, रीछ, सूअर आदि स्वतन्त्रता से चलने फिरनेवाले पशु पक्षियोंको बन्दूक वगैरह से मार डालना शिकार खेलना कहलाता है।

तथा खेलनेवाले शिकारी हैं। इससे घोर पापका बन्ध होता है। प्राणी अपने २ प्राणोंकी रक्षा चाहते हैं। शिकारी बिना किसी शत्रुताके ही उनका नाश करता है। एक शिकारीने बन्दूक चलाई, पीछेसे उसपर एक शेरने धावा कर दिया। उसी समय एक सर्पने उसके साथीको डस लिया—यह है शिकार का फल।

कभी न परके प्राण गवाना, उनका हितकर पुण्य कमाना।
निर्बलका जो प्राण हरेंगे, दुखसागरमें आप पडेंगे॥

चोरी करना—रक्खी हुई, पड़ी हुई, भूली हुई अथवा न दी हुई दूसरेकी चीजोंका व रुपया पैसो का ग्रहण करना या दूसरेको दे देना चोरी करना है। यह काम करनेवाले चोर कहलाते हैं। मनुष्यों को धन दौलत अपने प्राणोंसे भी प्यारा लगता है। धनके लिये राजा महाराजा युद्ध करते हैं। व्यापारी नदी समुद्र पार करते हैं, बड़ी २ आपत्तियां उठाते हैं। धन बड़ी कठिनाईसे जुड़ता है। धनके जानेपर लोग जान भी खो देते हैं। इसलिए चोरीसे महान पापका बन्ध होता है।

चोर सदा दुतकारे जाते, जब तब देश निकाले जाते।
भूल चूक मत चोरी करना, घृणित पाप इससे नित डरना॥

परस्त्री सेवन—जिसके साथ धर्मानुकूल विवाह हुआ है वही अपनी स्त्री है। शेष अपनी मां, बहिन और पुत्रीके समान हैं।

मधु त्याग।

शहदके खानेका त्याग करना मधु त्याग है। मक्खियां फलों से रस मुंहमें भर लाती हैं और एक जगह उगलकर रखती हैं इसे ही शहद कहते हैं। हर समय इसमें अनेकानेक जीव उत्पन्न हो और मरते रहते हैं। वहां और मक्खियोंके छत्ते निचोडकर शह तैयार किया जाता है। इससे छत्तोंमें उनके अंडे तथा बच्चे मर ज हैं। इस लिए शहदका खाना महान घृणाजनक, हिंसाकारक औ निन्दनीय काम है। अपनी जीभके लोभ या थोड़े लाभके लिये करो जीवोंकी हत्या करना महान अधर्म है। इसलिये मधुभक्षणका सर्व त्याग कर देना चाहिये।

[हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पांच पापों स्वरूप आ चुका है। इन पांच पापोंका त्याग तथा उक्त तीन मकारों त्याग करना भी अष्ट मूलगुण है।]

प्रश्नावली

१ पाप और व्यसनमें क्या अन्तर है ?
२ सबसे बुरा व्यसन कौन-सा है ?
३ स्त्री सेवन, परस्त्री सेवन और वेश्या सेवनमें क्या अन्तर है ?
४ जुआ खेलनेसे क्या २ हानियां हैं ?
५ मदिरा पान शिकार खेलना और चोरी करना किसे कहते हैं ?
६ मकार क्यों कहाते हैं ? वे कौन २ हैं ?
७ अष्ट मूलगुण कौन २ हैं ? दोनों तरहसे अलग २ गिनाओ।
८ मकारोंका त्याग नहीं करनेवाला श्रावक क्या नहीं हो सकता ?
९ सप्तव्यसन और सेवन म रण करनेवाला मूलगुण धारण करता है या नहीं ?
१० शराब कैसे तैयार होती है ? मधुमें क्या समझे ?

छठवा पाठ

अभक्ष्य ।

अभक्ष्य—उन्हे कहते है जिनके खानेसे त्रस जीवा तथा अनेक थावर जीवोंका घात होता है । अनिष्ट और असेव्य पदार्थोंका भक्षण करना भी अभक्ष्य कहलाता है । अभक्ष्य २२ प्रकारके होते हैं —

ओला, घोर, बरा, निशिभोजन, बहुबीजा, बैंगन सधान ।
बर, पीपर, ऊमर, कठूमर, पाकर, फल जो होय अजान ॥
कदमूल, माटी, विष, आमिष, मधु माखन, अरु मदिरापान ।
फल अति तुच्छ, तुसार, चलितरस, जिनमत यह बाईसबखान ॥

अर्थ—पांच उदम्बर और तीन मकारको बतला चुके है । इस तरह ८ हुए । ९ ओला, १० बैंगन, ११ अचार (नींबू आम वगैरहका अथाणा) १२ रात्रि भोजन १३ अजातफल (कोई भी फल शाक आदि पदार्थ जिसे न पहिचानते हो) १४ मिट्टी, १५ विष, १६ बरफ और १७ मक्खन १८ बडा या दहीबडा । इससे मतलब यह है कि उडद, मूग चना मसूर आदि जिनके दो टुकडे हो जाते हैं ऐसे अन्नोंको या उन्हे पीसकर कच्चे दूध, कच्चे दही या कच्चे दूधसे जमाये हुए दहीके झाक्षम डालनेसे द्विदल अन्न तैयार होता है ।

१९ बहुबीजा—ऐसे फल जिनके बीजोंका अलग अलग स्थान न हो । विषक कहनेसे कुचला, संखिया, घरम और धतूरा आदि समझना चाहिये ।

२० कन्दमूल—मूली, गाजर, प्याज लहसुन, शकरकंदी और सुरण वगैरह ।

सत्याणुव्रत

स्वय स्थूल झूठ नहीं बोलना और न दूसरेसे झूठ बुलवाना किन्तु आपत्तिमें सत्य भी नहीं बोलना या बुलवाना—सत्याणुव्रत है।

अर्थ यह है कि प्राणियोंकी हिंसा करनेवाले, दुःख देनेवाले वचन, झूठ बोलना और झूठ बुलवाना व्रतका उल्लघन करना है। जैसे चौराहे पर खड़े हुए आदमीसे कसाइ (हिंसक) ने गायके आगे जानेका रास्ता पूछा। इस समय गाय पूर्वमें गई हो तो पश्चिममें बतला देना ठीक है क्योंकि ऐसे वचनसे गायके प्राण बचते हैं। इसे सत्याणुव्रतका उल्लघन नहीं मानना चाहिये।

अचौर्याणुव्रत

रखे हुए, गिरे हुए भूले हुए और धरोहर रखे हुए दूसरेके पदार्थको न लेना और न दूसरेको देना आचौर्याणुव्रत है। चोरी करनेवालेको कभी शांति नहीं मिलती इसकी बुद्धिनष्ट हो जाती है। चोरके मां-बाप और कुटुम्बी जन अपना सम्बन्ध छोड देते हैं। इसलिये इसका त्याग करना उचित है। चोरीका त्यागकर अञ्जन चोरने मुक्ति प्राप्त की।

ब्रह्मचर्याणुव्रत

पापके भयसे परस्त्रीका सेवन न करना और न दूसरेको उनके पास भिजवाना, परस्त्री त्याग अथवा स्वदार सतोष ब्रह्मचर्याणुव्रत है। परस्त्री सेवनके समान कोई पाप नहीं है। इसके सेवनकरनेवालेको माता, बहिन और पुत्री सेवनके समान पाप लगता है। इसलिये इसका त्याग करना उचित है।

परिग्रह परिमाणाणुव्रत

धन धान्य, हाथी, घोडा सवारी आदिका परिमाणकरके उससे अधिक पदार्थों म अभिलाषा न रखना। क्षेत्र, वस्तु हिरण्य, सुवर्ण, धन, धान्य,दासी,दास,कुप्य और भाण्ड इस तरह वाह्य परिग्रहके दस भेद होते हैं। इनका परिमाण करनेसे आरभ वगैरह न होनेके कारण पुण्यबंध होता है और पदार्थों की अभिलाषासे निवृत्त होनेपर अपूर्व आनन्द आता है।

गुणव्रत

गुणव्रत—जो अणुव्रतोंको पालनेमे सहायता या मदद करे। इसके तीन भेद होते हैं —१ दिग्व्रत, २ देशव्रत,और३ अनर्थदण्डव्रत। स्वामी समन्तभद्रने दिग्व्रत, अनर्थदण्डव्रत और भोगोपभोग परिमाणव्रत ये तीन भेद बताये हैं।

दिग्व्रत—मरणपर्यन्त पापसे निवृत्त होनेके लिये दसों दिशाओंकी सीमाका परिमाण करके उनसे बाहर न जानेका सङ्कल्प करना। इन दिशाओंमे जो प्रसिद्ध प्रसिद्ध समुद्र, नदी, वन, पर्वत, देश, योजन हैं इनकी सीमाका नियमकर लेना चाहिये। इसेही दिग्व्रत कहते हैं। जैसे पूर्वमें कलकत्ता बन्दर, उत्तरमें हिमालय पर्वत, दक्षिणमे लङ्का नगरी और पश्चिममे सिन्ध नदी है। दिग्व्रती जन्म भर इससे बाहर नहीं जाता है। दिग्व्रत दिशाओंसे सम्बन्धित है।

देशव्रत

दिग्व्रतमें परिमाण की हुई मर्यादामे भी कालका नियम कर प्रतिदिन त्याग करना देशव्रत है। एक दिन, एक माह वगैरहके लिये ग्राम, घर, गली खेत, नदी, वन और योजनोंका नियम कर

देशव्रत है। जैसे सावन तक इस नगरके बाहर नहीं जाऊंगा और आज घरके बाहर नहीं जाऊंगा आदि। देशव्रत समयसे सबधित है

अनर्थदण्डव्रत

दिशाओंकी मर्यादाके भीतर प्रयोजन रहित पापके कारणोंसे विरत होना अनर्थदण्डव्रत है। व्यापार, हिंसा, आरम्भका उपदेश, मांकर तलवार आदि हिंसाके शस्त्र देना परस्त्री आदिके बन्धन आदिक विचार करना, मिथ्यात्व, राग, द्वेष आदिका पोषण करना, चित्तको कलुषित करनेवाले शास्त्रोंका सुनना तथा बिना प्रयोजन पृथ्वी खोदना या वनस्पति छेदना आदि क्रियाय अनर्थदण्डव्रतधारी नहीं करता है।

शिक्षाव्रत

शिक्षाव्रत—इनके पालन करनेसे मुनिव्रत पालन करनेकी शिक्षा प्राप्त होती है। इसके ४ भेद होते हैं —१ सामायिक, २ प्रोषधोपवास ३ भोगोपभोग परिमाण, ४ अतिथि सविभाग।

स्वामी समन्तभद्रने देशावकाशिक, सामायिक प्रोषधोपवास और वैयावृत्य ये ४ शिक्षाव्रत कहे गये हैं।

आठवा पाठ

सामायिक

सामायिक—मन, वचन, काय और कृत कारित अनुमोदनासे प्रतिज्ञित निश्चित समय तक मर्यादा और मर्यादा के बाहर सङ्कल्प पूर्वक पांच पापोंका त्याग करना सामायिक है। सामायिक खड्गासन और पद्मासनसे एकान्त उपद्रव रहित वन, घर, या मठमें प्रसन्न

चित्तसे करनी चाहिये। एकाशन अथवा उपवासके दिन भी मन, वचन, कायकी सांसारिक क्रियायें छोड़कर आत्मामें लीन होना चाहिये और अनित्य, अशरण आदि भावनाओंका चिन्तवन करना चाहिये। सामायिकमें परीषह और उपसर्ग सहन करने चाहिये। सामायिक प्रतिदिन प्रमाद रहित होकर करनेसे महाव्रत पालन करनेका बल प्राप्त होता है। सामायिक करते समय समस्त आरम्भ और परिग्रहोंका त्याग हो जाता है। उपसर्गवश वस्त्र धारण करनेवाले मुनिके समान मालूम पड़ता है।

प्रोषधोपवास

अन्न, पान, खाद्य और लेह्य इन चार प्रकारके आहारोंका त्याग करना उपवास है। एक बार भोजन करना प्रोषध है। प्रति मास ४ दिन उपवास करना अथात् १६ पहरके अष्टमी और चतुर्दशीके दिन आहार तथा समस्त विषय कषायोंका त्याग करना प्रोषधोपवास है। प्रोषधोपवास के दिन आभूषण, आरम्भ गन्ध, पुष्प, गीत, नृत्य अञ्जन, स्नान, इतर, फुल्लेल आदि पांचों इन्द्रियोंके विषयोंका त्याग करना चाहिये और प्रमादरहित धर्मका श्रवण करना, कराना एवं ज्ञान ध्यानमें लीन रहना चाहिये। १६ पहर का उत्तम, १२ पहरका मध्यम, ८ पहरका जघन्य उपवास होता है। अन्य आचार्यके ग्रन्थोंमें अन्य रूपसे भी वर्णन है। यह उन २ ग्रन्थोंसे मालूम करना चाहिये।

भोगोपभोग परिमाण

प्रतिदिन सङ्कल्प पूर्वक नियम करके भक्ष्याभक्ष्य का परिमाण या त्याग करना भोगोपभोग परिमाण है।

पाच इन्द्रिय सम्बन्धी विषय, भोजनादि जो एक बार भोगा जाय उसे भोग कहते हैं। और वस्त्रादि जो बार बार भोगा जा सके उसे उपभोग कहते है। अनिष्ट, अनुपसेव्य तथा त्रस जीवोंकी हिंसाका त्याग, मद्य, मांस, मधु और अभक्ष्यादिका सर्वथा जीवन पर्यंत त्याग कर देना चाहिये। शेष पदार्थों का एक दिन, सप्ताह, पक्ष, मास, दो मास और छह महीने आदिके लिये त्याग करना चाहिये। अद्रक, मूली, गाजर, मक्खन आदि अधिक हिंसाके कारण रूप कन्दमूल आदिका भी त्याग करना अच्छा है।

अतिथि सविभाग

भक्तिपूर्वक सम्यक्त्व आदि गुणोंके निधान, निर्ग्रन्थ मुनियोंको धर्म समझकर प्रत्युपकारकी इच्छा न रखते हुए दान देना अतिथि सविभागव्रत अथवा वैयावृत्य शिक्षाव्रत कहलाता है। इसके ४ भेद १ आहारदान २ ज्ञानदान, ३ औषधदान और ४ अभयदान।

स्वामी समन्तभद्रने १ आहार, २ औषध, ३ उपकरण और आवास (वसतिका दान बताये हैं।

आहारदान—निर्ग्रन्थमुनि, प्रतिमाधारी, श्रावक, व्रती, दीन दुखी अनाथों और असहायोंको भोजन कराना आहारदान है।

ज्ञानदान—गुरुकुल, ब्रह्मचर्याश्रम, बोर्डिंग, पाठशाला, शास्त्रार्थ संघ और वक्तृत्व-सभाओं आदिके लिये दान करना ज्ञानदान है।

औषधदान—दीन, दुखी, रोगी स्त्री, पुरुषोंको दवाइ देना, औषधालय, अस्पताल, प्रसूतिगृह आदि खुलवाना औषधदान है।

अभयदान—प्राणियोंकी रक्षा और मुनिव्रती, त्यागी तथा या

आदिके लिए मकान, धर्मशाला, झोपडी, कुटी और मठ आदि बन
वाना अभयदान है। चोर, डाकू आदिके भय-स्थानोंमें पहर
अन्धेरी रात्रिमे दीपक लगाना आदि भी अभयदान है। इसे
वैयावृत्य शिक्षाव्रत कहते हैं।

प्रश्नावली

१ व्रत किसे कहते हैं? व्रतके कितने भेद होते हैं?
२ दिग्व्रत और देशव्रतके लक्षण कहो।
३ स्वामी समन्तभद्रके अनुसार गुणव्रत और शिक्षाव्रतमें क्या भेद हैं?
४ सामायिक किस तरह और कब करना चाहिये?
५ प्रोषध उपवास और प्रोषधोपवास तथा यम नियमके लक्षण कहो।

नवमा पाठ

ग्यारह प्रतिमा

श्रावकोंके ११ पद (गुणस्थान) अथवा प्रतिमायें होती हैं। पं
दौलतरामजी ने प्रतिमाओंके 'ग्यारह भेद" बताये हैं। ऊपी प्रतिम
के धारण करने वालेको उससे पहिली प्रतिमाओंका पालना बहु
आवश्यक है। जैसे आरम्भ त्याग प्रतिमाधारीको दर्शन प्रतिमा
से ब्रह्मचर्य प्रतिमा तक सभी प्रतिमाओंका पालन करना आवश्य
है। प्रतिमायें क्रमसे (दर्शनसे व्रत, व्रतसे सामायिक आदि) बढा
जाना चाहिये। ग्यारहवीं प्रतिमाके बाद मुनिपद प्राप्त होता है
११ प्रतिमायें इस प्रकार हैं—

१ दर्शन

जो सम्यग्दर्शन धारणकर ससार, शरीर और विषय भोगोंसे
विरक्त हो, पंचपरमेष्ठीके चरणोंकी शरणमें रहता हो, जैन सत्यमार्ग
का अनुयायी हो, और अष्ट मूलगुणोंका धारक हो, उसे दर्शन प्रतिमा
धारी कहते हैं तथा वह दार्शनिक श्रावक कहलाता है।

२ व्रत

अतिचार रहित पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत
धारण करता हो उसे व्रत प्रतिमाधारी कहते हैं। इन सबका स्वरूप
पहिले कह दिया गया है। वह प्रतिमाधारी व्रती श्रावक कहलाता है।

३ सामायिक

मन, वचन और कायको पवित्र कर सवेरे, दोपहर और शामको
प्रतिदिन दो दो घडी सामायिक करना सामायिक प्रतिमा है। प्रत्येक

दिशामें तीन २ आवर्त्त और एक एक नमस्कार करना चाहिये, फिर पूर्व या उत्तरमें पद्मासन या खड्गासनसे सामायिक करना चाहिये। प्रत्येक आवर्त्त और नमस्कारसे पूर्व समयानुसार १०८ बार या ९ बार णमोकार मन्त्रका जाप देना चाहिये।

सामायिकमें आत्मा और कर्मका वास्तविक स्वरूप समझे और अनित्यादि भावनाओंका चिन्तवन करे, जिससे ससारसे उदासीनता और वैराग्य उत्पन्न हो जाय। सामायिकका उत्कृष्ट समय छह घडी मध्यम चार घड़ी और जघन्य २ घडी है।

४ प्रोषधोपवास

प्रत्येक महीने की प्रत्येक अष्टमी और चतुर्दशीके दिन अपनी शक्तिके अनुसार १६, १२ और ८ पहरका उपवास ग्रहण करे। शेष प्रोषधोपवास शिक्षाव्रतमें जैसे बता दिया गया है उसका अनुसरण करे वह प्रोषधोपवास प्रतिमाधारी है।

५ सचित्त त्याग

जो कच्चे गाजर, मूली, पत्र, फल, फूल, शाक, कोंपल, छाल, करीर जमीकन्द, अकुर और बीज वगैरह नहीं खाता है वह सचित्त-त्याग प्रतिमाधारी है। जिसमें जीव है उसे सचित्त कहते हैं। अचित्त करके वनस्पति आदि खाना चाहिये। सुखाना, पकाना, तपाया हुआ, बनाया हुवा, नमक मिलाया हुआ आदि फल फूल अचित्त कहलाते है। विशेष "क्रियाकोष" आदि ग्रन्थोंमे देखिये।

६ रात्रि भुक्ति त्याग

अन्न, पान, खाद्य और लेह्य इन चार प्रकारके

न खाना रात्रि भुक्ति (भोजन) त्याग प्रतिमा है। सूर्यके अस्त होनेम दो घड़ी (४८ मिनट) बाकी रहें तबसे और सूर्यके उदय होनेके द घड़ी बाद तक भोजन नहीं करना चाहिये। दाल, भात आदि अन्न ल्य जल आदि पान, पेडा, बर्फी आदि खाद्य और रबड़ी (बासुन्दी आदि लेह्य कहलाता है।

"क्रियाकोष" में दिवा मैथुन-त्यागको भी छठी प्रतिमा कहा है अर्थात् दिनमें ब्रह्मचर्य्य से रहना। इस प्रकार रात्रि भोजनके त्याग को सालमें छह मास उपवास करने का फल मिलता है तथा दयावा कहलाता है।

७ ब्रह्मचर्य्य प्रतिमा

मन, वचन, काय और कृतकारित अनुमोदना से स्त्री मात्रक त्याग करना ब्रह्मचर्य प्रतिमा है।

शरीर मल स्वरूप है, मल पैदा करता है और सदा नौ द्वारों कफ कीचड़, पसेऊ मूत्र आदि मल बहाया करता है। इसलिये बहु घिनावना और भयंकर है, मांस हड्डी आदिका पिंड है, ऐसा समझक स्त्री सेवन, उनके अंग देखना, उनकी चर्चा आदि करना, मन वचन कायसे छोड़ देना चाहिये।

८ आरम्भ-त्याग प्रतिमा

शस्त्रादिका काम, नौकरी, खेती, शिल्प, व्यापार आदिके आरम्भ प्राणियोंकी हिंसा होती है, इसलिये इन कामोंका मन वचन काय औ कृत-कारित अनुमोदना से त्याग करना आरम्भ त्याग प्रतिमा है। साधुओंमें प्रेम रक्खे। आरम्भ करनेसे दयाका भाव नहीं रहता;इसलिये

ससारमे भ्रमण करना पड़ता है । इसलिये गृहस्थारम्भका त्याग करना चाहिये । स्नान, दान, पूजन आदि धर्म कार्य करने की अनुमति है ।

९ परिग्रह त्याग प्रतिमा

क्षेत्र, वस्तु, सुवर्ण धन आदि दस प्रकार के वाह्य परिग्रह से ममता छोडकर आत्मलीन होता हुआ सन्तोष धारण करना परिग्रह त्याग प्रतिमा है । वस्त्रको छोडकर धातु वगरह नहीं रखना चाहिये । नरम पूजणी ,पिच्छी। और कमण्डल रखना चाहिये । लकडी और मिट्टीका वर्तन रख सकता है, दूसरी धातुओं के वर्तन नहीं रख सकता । बुलाने पर किसी श्रावक के घर भोजन करने जावे ।

१० अनुमति त्याग प्रतिमा

ससार सम्बन्धी आरम्भ, परिग्रह और विवाह आदि कामो म सम्मति न देना और रागद्वेष रहित रहना अनुमति-त्याग प्रतिमा है । जिन वचन के सिवाय ससार के विषयकी चर्चा न करे, क्योंकि इससे पापका वन्ध होता है । शुभ और अशुभकी चाह छोड दे । शत्रु मित्र, कांच कंचन और महल श्मशान आदिमे समता धारण कर ।

११ उद्दिष्ट त्याग प्रतिमा

जो घरसे निकल कर मुनिराजसे व्रत ग्रहण कर, भिक्षासे भोजन करे, और खंड वस्त्र (शरारके बराबर न रहे) धारण करे, उसे उद्दिष्ट त्याग प्रतिमा कहते हैं । इनके दो भेद हैं [illegible] क्षुल्लक
के पास खण्डवस्त्र पीछी और [illegible] ऐलकके
पास लंगोटके सिवाय कुछ नहीं

पिच्छी रख सकता है ।* क्षुल्लक बर्तनों में जीम सकता है, लेकि ऐलक हाथमें रखकर खाते हैं। क्षुल्लक बाल बनवा सकता है लेकि एलकको केशलोंच करना पड़ता है।

आचार्य ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यके सिवाय और किसी एलक और मुनिका व्रत नहीं देते हैं।

पहली प्रतिमा से छठी प्रतिमा तक जघन्य, सातवीं, आठवीं और नवमी प्रतिमाधारक मध्यम और दसवीं,ग्यारहवीं प्रतिमाधारक उत्तम श्रावक कहलाता है।

प्रश्नावली

१ प्रतिमा किसे कहते हैं ? कितनी हैं ? नाम सुनाओ।

२ परिग्रह त्याग, दिवामैथुन त्याग, उद्दिष्ट त्याग और सचित्तत्याग प्र किसे कहते हैं ?

३ ऐलक और क्षुल्लकमें क्या भेद है ?

४ आठवीं प्रतिमा धारण करनेवालेको छठी और नवमी प्रतिमाका पालन करना आवश्यक है या नहीं ? समझाओ।

५ प्रतिमाके क्या क्या नाम हैं ? अलग अलग नाम होनेका प्रयोजन समझाओ। उत्तम मध्यम, जघन्य कौन कौन प्रतिमाधारी हैं ?

* पं दौलतरामजी क क्रियाकोषके आधारपर।

दशम पाठ

तत्व तथा पदार्थ

मुख्य तत्व दो हैं—जीव और अजीव। इन दोनोंमें सब गर्भित हो जाते हैं। किन्तु विशेष समझाने के लिये १ जीव, २ अजीव, ३ आस्रव ४ बन्ध, ५ संवर, ६ निर्जरा और ७ मोक्ष—ये तत्त्वके सात भेद होते हैं। ७ तत्त्वोंमें पुण्य और पाप ये दो और मिलाकर नव पदार्थ होते हैं।

जीव—जिसमें चेतना अर्थात् ज्ञान-दर्शन रूप भाव प्राण हो जिसमें ५ इन्द्रिय, ३ बल (मन वचन, काय) आयु और श्वासोच्छ्वास ये दस द्रव्य प्राण पाये जावें। जैसे मनुष्य देव, नारकी और तिर्यञ्च (पशु पक्षी आदि)।

अजीव—जिसमें चेतना न पाइ जाव। अथात् ज्ञान तथा दर्शन न हो। जैसे पुस्तक, टोपी ग्रामोफोन इत्यादि।

आस्रव—बंधके कारण को आस्रव कहते हैं। ज्ञानावरणादि द्रव्य कर्म और रागादि भाव-कर्मो का आना आस्रव है। आत्माके जिन परिणामों से कर्म आता है उसे भावास्रव और ज्ञानावरणादि पुद्गल कर्मों का आना द्रव्यास्रव है।

आस्रवके ५ भेद होते हैं—१-पांच मिथ्यात्व २—पांच अविरति ३—पन्द्रह प्रमाद, ४—तीन योग और ५—चार कषाय—इस प्रकार ५ भेद और ३२ प्रभेद हो जाते हैं।

मिथ्य

मोहनीय

सत्ता

मिथ्यात्व है। इसके ५ भेद हैं—१ विपरीत, २ एकांत, ३ विनय, ४ संशय और ५ अज्ञान।

विपरीत—वस्तुके स्वभावसे विरुद्ध जानना।

एकान्त—वस्तुमें अनेक धर्म होनेपर भी किसी एकको जानना।

विनय—सम्यक्त्वसे रहित होकर, बुद्ध, शंकर, और ईसा सब समान रूपसे आदर करना।

संशय—वस्तुके स्वरूपमें सन्देह करना।

अज्ञान—अपने हित अहितको न पहिचानना।

अविरति

आत्माके स्वभावसे हटकर संसारके विषयोंमें प्रवृत्ति करना अविरति है। छह कायके जीवोंकी हिंसा करना पांच इन्द्रिय और मनको वशमें न करना भी अविरति है। इस प्रकार यह १२ प्रकारकी है या हिंसा आदि पांच पापोंमें प्रवृत्ति करना ५ प्रकारकी अविरति है

प्रमाद

सम्यग्दर्शनादि गुणशीलोंमें असावधानता या अनादरको प्रमाद कहते हैं। ये १५ होते हैं—

४ विकथा, ४ कषाय, ५ इन्द्रिय १ निद्रा, और १ प्रणय (स्नेह)। (स्त्री कथा, राज कथा, राष्ट्र कथा और भोजन कथा—ये चार विकथायें हैं।)

योग

मन वचन कायसे कर्मोंके आनेकी शक्तिको योग कहते हैं। योगके तीन भेद हैं—मन, वचन और काय। इनके १५ भेद होते हैं

सत्य, असत्य, उभय, अनुभय, ये ४ सत्य मनोयोगके और इसी प्रकार ४ वचन योगके ये दोनों मिलकर ८ हुये। और १ औदारिक, २ वैक्रियक, ३ आहारक, ये तीनों औदारिक मिश्र आदि रूपसे ६ तथा १ कार्माण योग, इस प्रकार १५ भेद होते हैं।

कषाय

जो सुख दुखादि रूपसे आत्माके परिणामोंको कषे उसे कषाय कहते हैं। इसके १ क्रोध २ मान ३ माया और ४ लोभ ये मुख्य चार भेद हैं। १६ कषाय और ९ नोकषायके भेदसे २५ भेद भी हैं। अनन्तानुबन्धी प्रत्याख्यान, अप्रत्याख्यान और सज्वलन इन चारोंके क्रोध, मान, माया लोभ ये ४ भेद होते हैं। इस प्रकार १६ हुए। १ हास्य २ रति ३ अरति ४ शोक ५ भय ६ जुगुप्सा, और ७ स्त्री-वेद, ८ पुंवेद, ९ नपुंसक वेद इस प्रकार १६+९=२५ भेद हुए।

इस प्रकार आस्रवके ३२ और ५७ भेद होते हैं।

मिथ्यात्व=१	५	ये भेद कथन की अपेक्षा है।
अविरति=१	१२	
प्रमाद=१५	०	
योग=३	१५	
कषाय=४	२५	
३२	५७	

बन्ध

द्रव्य भाव रूप कर्मोंका

दो भेद है—

जिस चेतनाके परिणामसे कर्म बधता है वसे भावबन्ध और कर्मके पुद्गल परमाणुओं का आत्माके प्रदेशोंके साथ बधना द्रव्यबन्ध है।

मिथ्यात्व, अविरति, आदि भावोंके कारण कर्म आते हैं और आत्मा के प्रदेशोंमें बध जाते है। जैसे गुड़में धूलि मिलकर गुड़ रूप हो जाता है।

बधमें कारण आस्रव है और आस्रवका कार्य बन्ध है। आस्रव और बन्ध एक ही समयमें होता है।

सवर

आस्रवके रुकनेको अर्थात नष्ट कर्मों को नहीं आने देनेको सवर कहते है। इसके दो भेद हैं—भावसवर और द्रव्यसवर। आत्मा का जो परिणाम कर्मोंके आस्रवको रोकने मे कारण है वह भावसवर और द्रव्यास्रवका रुक जाना द्रव्यसवर है। (तत्वार्थ सूत्रके अनुसार सवरके ३ गुप्ति, ५ समिति, १० धर्म, १२ अनुप्रेक्षा, २२ परिषहजय,५ चारित्र और १ तप इस प्रकार ५८और ५ समिति, ३ गुप्ति, १० धर्म, १२ अनुप्रेक्षा, २२ परिषहजय और चारित्र इस प्रकार द्रव्यसग्रहके अनुसार ६२ भेद हैं। तत्वार्थ सूत्र १२ तप दिये गये है और द्रव्यसग्रहमें तप न देकर ५ व्रत दिये गये है।

३ गुप्ति—ससारके विषयोंसे मन वचन कायकी प्रवृत्तिको रोकना गुप्ति है। ये तीन होती हैं—मन, वचन, काय।

५ समिति—ईर्या, भाषा, एषणा, आदाननिक्षेपण और उत्सर्ग।

१० धर्म—ससारमें गिरनेसे रक्षा करनेवाला धर्म है। व १० हैं—उत्तम क्षमा, उत्तम मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, सयम, तप, त्याग आकिंचन्य, और ब्रह्मचर्य। इनका वर्णन हो चुका है।

१२ अनुप्रेक्षा—बार बार चिन्तवन करने को अनुप्रेक्षा कहते हैं

नित्य, अशरण आदि रूप बार २ चिन्तवन करना अनुप्रेक्षा थवा भावना है। वे ये हैं—अनित्य, अशरण, ससार, एकत्व, अन्यत्व, शुचि, आस्रव, सवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ और धर्म।

१ अनित्य—तीन लोकमे कोई पदार्थ नित्य नहीं हैं सब नष्ट हो वेगी एसा बार २ विचारना अनित्यानुप्रेक्षा या अनित्य भावना है। सी प्रकार अन्य भावनाओंमे भी समझना चाहिये तथा अनित्यके थानपर "अशरण" आदि बदल देना चाहिये।

२ अशरण जिस प्रकार वनमे सिंहसे बचनेके लिये हरिणको कोइ रण नहीं मिलता उसी प्रकार ससारमें मृत्यु आदिसे बचानेवाला कोइ हीं। केवल रत्नत्रय धर्म ही शरण है, इत्यादि।

३ ससार—ससारमे किसी प्रकारसे सुख नहीं है, ससार घोर दुःखमय है इसमे कुछ भी सार नहीं है।

४ एकत्व—आप अकेला उत्पन्न होता और अकेला ही मरता है मेरा कोई साथी नहीं, मैं, किसी का नहीं। सुख दु खका मैं ही कर्त्ता, मैं ही भोक्ता हू।

५ अन्यत्व—मैं महल वगैरह सबसे पृथक हू, ये मेरे नहीं हैं मैं इनका नहीं हो सकता। स्त्री पुत्रादि सब मतलबके साथी हैं। अधिक तो क्या, मेरा शरीर भी मेरा साथी नहीं है, जो सम्मिलित मालूम पडता है। फिर स्पष्ट रूपसे भिन्न पदार्थ मेरे कैसे हो सकते हैं?

६ अशुचि—यह शरीर बहुत ग्लानिकारक है, इसमें मल भरा है, मल मूत्रादि बहता है, मांस खून आदिकी थैली है, इस देहमे कुछ भी मोहकता नहीं है। इससे कैसे प्रीति हो?

७ आस्रव—ससार की क्रियाओंमे मन, वचन, कायकी प्रवृत्ति है।

११ कन्करीली जमीन अथवा पत्थर पर एक ही करवटसे सोनेका दुःख सहन करना शय्या परीषह है।

१२ किसी दुष्ट पुरुषके गाली वगैरह देनेपर भी क्रोध न करके क्षमा धारण करना, आक्रोष परीषह है।

१३ किसी दुष्ट पुरुष द्वारा मारे पीटे जाने पर भी क्रोध और क्लेश नहीं करना वध परीषह है।

१४ भूख प्यास लगने अथवा रोग हो जानेपर भी भोजन, औषधादि वगैरह नहीं मांगना, याचना परीषह है।

१५ भोजन न मिलने अथवा अन्तराय हो जानेपर क्लेश न करना अलाभ परीषह है।

१६ बीमारीका दुःख न करना रोग परीषह है।

१७ शरीरमें कांच, सूई कांटे वगैरहके चुभ जानेका दुःख सहन करना तृणस्पर्श परीषह है।

१८ शरीरमें पसीना आ जाने अथवा धूल मिट्टी लग जानेका दुःख सहन करना और स्नान नहीं करना, मल परीषह है।

१९ किसीके आदर सत्कार अथवा विनय प्रणाम वगैरह न करने पर बुरा न मानना, सत्कार पुरस्कार परीषह है।

२० अधिक विद्वान अथवा चारित्रवान हो जानेपर भी मान न करना प्रज्ञा परीषह है।

२१ अधिक तपश्चरण करनेपर भी अवधिज्ञान आदि न होनेसे क्षोभ न करना अज्ञान परीषह है।

२२ बहुत काल तक तपश्चरण करनेपर भी कुछ फलकी प्राप्ति न होनेसे सम्यग्दर्शनको दूषित न करना अदर्शन परीषह है।

चारित्र

अशुभ कर्मोंसे विरक्त और शुभ कर्मों मे प्रवृत्त होना चारित्र है। वह चारित्र-व्रत-समिति रूप होता है। सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहार विशुद्धि, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात चारित्र इस प्रकार चारित्रके ५ भेद हैं।

१ सब जीवोंमें समता भाव रखना, सुख दुःखमें समान रहना शुभ अशुभ विकल्पोंका त्याग करना, सामायिक चारित्र है।

२ सामायिकसे डिग जानेपर फिर अपनेको अपनी शुद्ध आत्मा के अनुभवमें लगाना तथा व्रतादिकमें भंग पड़नेपर प्रायश्चित्त वगैरह कर सावधान होना छेदोपस्थापना चारित्र है।

३ राग द्वेषादि विकल्पोंका त्यागकर अधिकताके साथ आत्म-शुद्धि करना परिहार-विशुद्धि चारित्र है।

४ अपनी आत्माको कषायसे रहित करते-करते सूक्ष्म लोभ कषाय नाम मात्रको रह जाय उसको सूक्ष्मसांपराय कहते हैं। उसके भी दूर करनेकी कोशिश करना सूक्ष्मसांपराय चारित्र है।

५ कषाय रहित जैसा निष्कंप आत्माका शुद्ध स्वभाव है, वैसा होकर उसमें मग्न होना, यथाख्यात चारित्र है।

निर्जरा

कर्मो का एकदेश रूप झड़ते जाना निर्जरा है। इसके द्रव्य निर्जरा और भाव-निर्जरा दो भेद हैं।

आत्माके जिस भावसे कर्म अपना फल देकर नष्ट होता है वह भाव निर्जरा है। कर्मोकी स्थिति पूरी होनेपर जिनका फल

चुका है वह कर्म पुद्गल जिस आत्माके परिणामसे झड़ता है उसे सविपाक निर्जरा और जो बारह प्रकारके तप द्वारा आत्माके परिणामसे कर्म झड़ता है उसे अविपाक निर्जरा कहते हैं। इस प्रकार भाव निर्जराके भी दो भेद हो गये हैं। समय पाकर तपसे कर्मोंका छूट जाना, झड़ जाना, द्रव्य निर्जरा है।

मोक्ष

समस्त कर्मों का सर्वथा क्षय हो जाना मोक्ष है। इसके दो भेद हैं—भाव मोक्ष और द्रव्य मोक्ष।

समस्त कर्मोंके क्षयका कारण आत्माका जो परिणाम है वह भाव मोक्ष है और द्रव्य कर्मों का आत्मासे पृथक होना द्रव्य मोक्ष है।

पदार्थ

जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा और मोक्ष ये सात तत्व और पुण्य तथा पाप इस प्रकार पदार्थ ९ होते हैं।

पुण्य—जिन शुभ भावोंसे प्राणियोंको सुखकी सामग्री वगैरह मिले उसे पुण्य कहते हैं। साता वेदनीय, शुभ आयु, शुभ नाम और शुभ गोत्र ये पुण्य कर्मके उदयसे प्राप्त होते हैं और अच्छा खाना पीना, सवारी आदि, दीर्घ और स्वस्थ जीवन, देवगतिमें जन्म पाना, उत्तम देह प्राप्त करना और लोकपूज्य कुलमें उत्पन्न होना यह सब पुण्यका फल है।

पाप—जिन भावोंके उदयसे प्राणियोंको दुःख मिले उसे पाप कहते हैं। असाता वेदनीय, अशुभ आयु, अशुभ नाम और [illegible] पाप कर्मके उदयसे प्राप्त होते हैं। दरिद्र [illegible] होना [illegible] मिलना, नरक और तिर्यं[illegible]

र कुरूप देह प्राप्त करना तथा लोकनिन्द्य कुलमें उत्पन्न होना यह व पाप कर्मके उदयसे मिलता है।

प्रश्नावली

१ द्रव्य तत्व और पदार्थ इनके अभिप्राय स्पष्ट बताओ।
२ आस्रव को नावके दृष्टान्त पर समझाओ।
३ द्रव्य निर्जरा, भाव निर्जरा,द्रव्यबन्ध और भावबन्ध—इनमें क्या अन्तर है ?
४ आस्रवके ३२ और ५७ भेद अलग गिनाओ।
५ एक साथ कितनी परीषह सहन की जा सकती हैं ? परीषह, उपसर्ग और विदुल्भसे क्या मतलब है ?

एकादश पाठ

कर्मोंकी उत्तर प्रकृतियां

कर्मकी मूल प्रकृतियां ८ हैं तथा उत्तर प्रकृतियां १४८ हैं। ज्ञानावरण की ५, दर्शनावरण की ६, वेदनीय की २, मोहनीय की २८, आयु की ४, नाम की ९३, गोत्र की २ तथा अन्तराय की ५।

ज्ञानावरण कर्म

मतिज्ञानावरण, श्रुतिज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मनःपर्यय ज्ञानावरण और केवलज्ञानावरण—ये पांच ज्ञानावरण कर्मके भेद या प्रकृतियां हैं।

१ मतिज्ञानावरण उसे कहते हैं जो मतिज्ञान को न होने दे अर्थात् मतिज्ञानका आवरण या घात करे।

२ श्रुतिज्ञानावरण उसे कहते हैं जो

३ अवधिज्ञानावरण उसे कहते हैं जो

अनतानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ, उन्हें कहते हैं जो आत्मा के सम्यग्दर्शन गुणका घात करे। जब तक यह कषाय सहित है,सम्य दर्शन नहीं होता।

अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ उन्हें कहते हैं जो आत्माके देशचारित्रका घात करे अर्थात् जिनके उदयसे श्रावकके १२ व्रत पालन करनेके भाव न हों।

प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ उन्हें कहते हैं जो आत्माके सकलचारित्रको नष्ट करें अर्थात् जिनके उदयसे मुनियोंके व्रत पालन करनेके भाव न हों।

सञ्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ, उन्हें कहते हैं जो आत्माके यथाख्यात चारित्रका नाश करे अर्थात् जिनके उदय से चारित्रकी पूर्णता न हो।

नोकषाय (किंचित् कषाय) के ६ भेद हैं —हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पु वेद, नपु सकवेद।

हास्य—उसे कहते हैं जिसके उदयसे हसी आवे।

रति—उसे कहते हैं जिसके उदयसे प्रीति हो।

अरति—उसे कहते हैं जिसके उदयसे प्रीति न हो।

शोक—उसे कहते हैं जिसके उदयसे सताप हो।

भय—उसे कहते हैं जिसके उदयसे भय (डर) हो।

जुगुप्सा—उसे कहते हैं जिसके उदयसे ग्लानि उत्पन्न हो।

स्त्रीवेद—उसे कहते हैं, जिसके जी

भाव हों।

पु वेद—उसे कहते हैं जिसके र

नपुसकवेद–इसे कहते हैं जिसके उदयसे स्त्री पुरुष दोनोंसे रमने के भाव हों।

इस प्रकार १६ कपाय, ६ नोकषाय—ये २५ चारित्रमोहनीय की और ३ दर्शनमोहनीय की—कुल मिलाकर मोहनीय कर्मकी २८ प्रकृतियां हैं।

आयुकर्म

आयुकर्मके चार भेद हैं—नरक आयु, तिर्यञ्च आयु, मनुष्य आयु, देव आयु।

नरक आयु—वह है जो जीवको नारकीके शरीरमे रोक रक्खे।
तिर्यञ्चआयु—वह है जो जीवको तिर्यचके शरीरमें रोक रक्खे।
मनुष्यआयु—वह है जो जीवको मनुष्यके शरीरमें रोक रक्खे।
देव आयु—इसे कहते हैं जो जीवको देवके शरीरमे रोक रक्खे।

नामकर्म

इस कर्मकी ९३ प्रकृतियां हैं—

४ गति (नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देव) इस गति नाम कर्मके उदय से जीवका आकार नारकी,तिर्यंच,मनुष्य और देवके समान बनता है।

५ जाति—एकइन्द्रिय, द्वीइन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय, पांच इन्द्रिय—इस जाति नाम कर्मके उदयसे जीव एक इन्द्रिय आदि शरीरको धारण करता है।

५ शरीर (औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्माण) इस शरीर-नामकर्मके उदयसे जीव औदारिक आदि शरीरको धारण करता है।

३ अगोपांग (औदारिक, वैक्रियक, आहारक)—इस नाम कर्मके उदयसे हाथ, पैर, सिर, पीठ वगैरह अंग, ललाट, नासिका वगैरह उपागका भेद प्रगट होता है।

१ निर्माण—इस नाम कर्मके उदयसे अगोंपागकी ठीक ठीक रचना होती है।

५ बन्धन (औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तेजस, कार्माण)—इस नाम कर्मके उदयसे औदारिक आदि शरीरोंके परमाणु आपसमें मिल जाते हैं।

५ संघात (औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तेजस, कार्माण)—इस नाम कर्मके उदयसे औदारिक आदि शरीरोंके परमाणु विना छिद्रके एक रूपमें मिल जाते हैं।

६ संस्थान—समचतुष्क संस्थान, न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थान, स्वातिसंस्थान, कुब्जकसंस्थान, वामनसंस्थान, हुण्डकसंस्थान—इस नाम कर्मके उदयसे शरीरकी आकृति यानी शकल सूरत बनती है।

समचतुष्कसंस्थान नाम कर्मके उदयसे शरीरकी आकृति ऊपर नीचे तथा बीचमें ठीक बनती है।

न्यग्रोध परिमण्डल संस्थान नामकर्मके उदयसे जीवका शरीर बड़के पेड़की तरह होता है अर्थात् नाभिसे नीचेका भाग छोटा और ऊपरका भाग बड़ा होता है।

स्वातिसंस्थान नामकर्मके उदयसे शरीरकी शकल पहलेसे बिलकुल उलटी होती है यानी नाभिसे नीचेके अंग बड़े और ऊपरके छोटे होते हैं।

कुब्जकसंस्थान नामकर्मके उदयसे शरीर कुबड़ा होता है।

वामनसंस्थान नामकर्मके उदयसे शरीर बौना होता है।

हुण्डकसस्थान नामकर्मके उदयसे शरीरके अगोपांग किसी खास शक्लके नहीं होते हैं। कोई छोटा, कोई बड़ा, कोइ कम, कोई अधिक होता है।

६ सहनन (वज्रवृषभनाराचसहनन, वज्रनाराचसहनन, नाराच-सहनन, अर्द्धनाराचसहनन, कीलकसहनन, असंप्राप्तासृपाटिका सहनन)—इन नामकर्मके उदयसे हाडोंका बन्धन विशेष होता है।

वज्रवृषभनाराचसहनन—नामकर्मके उदयसे वज्रके हाड, वज्रके वेठन और वज्रकी कीलिया होती है।

वज्रनाराचसहनन—नामकर्मके उदयसे वज्रकी कीली होती है, परन्तु वेठन वज्रके नहीं होते हैं।

नाराचसहनन—नामकर्मके उदयमे हड्डियोंमे वेठन और कील लगी होती है।

अर्द्धनाराचसहनन—नामकर्मके उदयसे हड्डियोंकी सधियां आधी कालित होती हैं यानी एक तरफ तो कील लगी होती है परन्तु दूसरी तरफ नहीं होती तथा वज्रके समान कठोर नहीं होती।

कीलकसहनन—नामकर्मके उदयसे हड्डियोंकी सन्धियां कीलोंसे मिली होती हैं।

असंप्राप्तासृपाटिकासहनन—नामकर्मके उदयसे जुदी जुदी हड्डियां नसोंसे बंधी होती हैं, उनमें कील नहीं लगी होती हैं।

८ स्पर्श (कडा, नर्म, हलका, भारी, ठण्डा, गरम, चिकना, रूखा)—इस नामकर्मके उदयसे शरीरमे कडा, नर्म, हलका, भारी वगैरह स्पर्श होता है।

५ रस (खट्टा, मीठा, कडवा, कषायला, चपरा)—इस नामकर्मके उदयसे शरीरमें खट्टा, मीठा वगैरह रस (स्वाद) होते है।

२ गंध (सुगंध, दुर्गन्ध)—इस नामकर्मके उदयसे शरीरमें सुगंध या दुर्गन्ध होती है।

५ वर्ण (काला, पीला, नीला, लाल, सफेद) इस नामकर्मके उदय से शरीरमें काला पीला वगैरह रंग होते हैं।

४ आनुपूर्व्य, (नरक तिर्यंच, मनुष्य, देव)-इस नामकर्मके उदय से विग्रहगतिमें यानी मरनेके पीछे और जन्मसे पहले रास्तेमें मरनेसे पहले के शरीरके आकार आत्माके प्रदेश रहते हैं।

१ अगुरुलघु—इस नामकर्मके उदयसे शरीर न तो ऐसा भारी होता है जो नीचे गिर जावे और न ऐसा हलका होता है जो आककी रूईकी तरह उड़ जावे।

१ उपघात—इस नामकर्मके उदयसे ऐसे अंग होते हैं जिनसे अपना ही घात हो।

१ परघात—इस नामकर्मके उदयसे दूसरेका घात करने वाले अंगोपांग होते हैं।

१ आतप—इस नामकर्मके उदयसे आतपरूप शरीर होता है।

१ उद्योत—इस नामकर्मके उदयसे उद्योतरूप(प्रकाश)शरीर होता है।

१ विहायोगति (शुभ अशुभ)—इस नामकर्मके उदयसे जीव आकाशमें गमन करता है। इसके २ भेद होते हैं—प्रशस्त विहायोगति, अप्रशस्त विहायोगति।

१ उच्छ्वास—इस नामकर्मके उदयसे जीव श्वास और उच्छ्वास लेता है।

१ त्रस—इस नामकर्मके उदयसे दो इन्द्रिय आदि जीवोंमें जन्म होता है अर्थात् दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय, पांच इन्द्रिय होता है।

१ स्थावर—इस नामकर्मके उदयसे पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु अथवा वनस्पतिमें अर्थात् एक इन्द्रियमें जन्म होता है।

१ बादर (स्थूल)—यह वह नामकर्म है जिसके उदयसे दूसरेको रोकनेवाला और स्वय दूसरेसे रुकनेवाला शरीर होता है।

१ सूक्ष्म—यह वह नामकर्म है जिसके उदयसे ऐसा बारीक शरीर होता है जो न तो किसीसे रुकता और न किसीको रोकता है। लोहे, मिट्टी, पत्थरके बीचमेंसे होकर निकल जाता है।

१ पर्याप्ति—यह वह नामकर्म है जिसके उदयसे अपने योग्य आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा और मन—इन पर्याप्तियों की पूर्णता हो।

१ अपर्याप्ति—यह वह नामकर्म है जिसके उदयसे एक भी पर्याप्ति पूर्ण न हो।

१ प्रत्येक—इस नामकर्मके उदयसे एक आत्मा का स्वामी एक ही शरीर होता है।

१ साधारण—इस नामकर्मके उदयसे एक शरीरके स्वामी अनेक जीव होते हैं।

१ स्थिर—इस नाम कर्मके उदयसे शरीरके धातु और उपधातु अपने ठिकाने रहते हैं।

१ अस्थिर—इस नामकर्मके उदयसे शरीरके धातु और उपधातु अपने ठिकाने नहीं रहते हैं।

१ शुभ—इस नामकर्मके उदयसे शरीरके अवयव (हिस्से) सुन्दर होते हैं।

१ अशुभ—इस नामकर्मके उदयसे शरीरके अवयव ([illegible] होते हैं।

१ सुभग—इस नामकर्मके उदयसे दूसरे जीवोंको अपने शरीरसे प्रीति होती है।

१ दुर्भग—इस नामकर्मके उदयसे दूसरे जीव अपने शरीरसे अप्रीति वा वैर करते हैं।

१ सुस्वर—इस नामकर्मके उदयसे स्वर अच्छा होता है।

१ दुःस्वर—इस नामकर्मके उदयसे स्वर अच्छा नहीं होता है।

१ आदेय—इस नामकर्मके उदयसे शरीरपर प्रभा और कान्ति होती है।

१ अनादेय—इस नामकर्मके उदयसे शरीरपर प्रभा और कान्ति नहीं होती है।

१ यश कीर्ति—इस नामकर्मके उदयसे जीवकी संसारमें प्रशंसा और कीर्ति (नामवरी) होती है।

१ अयश कीर्ति-इस कर्मके उदयसे जीवकी कीर्ति नहीं होने पाती है।

१ तीर्थंकर—इस नामकर्मके उदयसे जीवको अरहन्त पद मिलता है अर्थात् वह तीर्थंकर होता है।

गोत्रकर्म

गोत्र कर्मके २ भेद है—उच्चगोत्र, नीचगोत्र।

उच्च गोत्र—उसे कहते हैं जिसके उदयसे जीव लोकमान्य ऊंच कुल में पैदा होता है।

नीच गोत्र—उसे कहते हैं जिसके उदयसे जीव लोकनिन्दित अर्थात नीचे कुल में पैदा हो।

अन्तराय कर्म

अन्तराय कर्मके ५ भेद हैं—दान अन्तराय, लाभ अन्तराय, भोग अन्तराय, उपभोग अन्तराय और वीर्य अन्तराय।

दान अन्तरायकर्म—जिसके उदयसे यह जीव दान न दे सके।

लाभ अन्तरायकर्म—जिसके उदयसे लाभ न हो सके।

भोग अन्तरायकर्म—जिसके उदयसे अच्छे पदार्थोंका भोग न कर सके।

उपभोग अन्तरायकर्म—उसे कहते हैं जिसके उदयसे जेवर कपड़ों वगैरह चीजोंका उपभोग न कर सकें।

वीर्य अन्तरायकर्म—उसे कहते हैं जिसके उदयसे शरीरमें सामर्थ्य यानी बल और ताकत न हो।

प्रश्नावली

१ कर्म किसे कहते हैं? मूल प्रकृतियां और उत्तर प्रकृतियोंके नाम अलग२ कहो।

२ सुभग, आदेय, शुभ, यशःकीर्ति, आनुपूर्व्य नाराच-संहनन कुब्जक संस्थान और स्त्यानगृद्धिके लक्षण कहो।

३ मनुष्य देव, सिंह, सर्प और बैलकी गति, जाति, शरीर अङ्गोपाङ्ग आदि सब फैलाकर बताओ।

४ नीचे लिखे काम किस २ कर्मके हैं? अन्धा पैदा होना, भंगी बनना, पुस्तक चोरी चली जाना, राजा बनाना भिखारी बनाना, मूर्ख होना, नरकमें पहुंचना छह उंगलियां होना, पुरुषसे रमनेके भाव, बौना शरीर, अपना घात, कीलोंसे हड्डियों की संधियां मिलना और तीर्थंकर बनना।

५ सबसे अच्छा और सबसे बुरा कर्म कौनसा है?

द्वादश पाठ

लोक

लोक उसे कहते हैं जिसमें जीव आदि समस्त द्रव्य देखे जा‍ अथवा जो समस्त द्रव्योंको स्थान दे और स्वयं रहे। आकाशके द भेद होते हैं—एक लोकाकाश और दूसरा अलोकाकाश। जिसमें अन आकाशके सिवाय कुछ नहीं है उसे अलोकाकाश और जिसमें जीव आदि छहो द्रव्य पाये जावें उसे लोकाकाश कहते हैं।

लोकका आकार

(१)नीचे मुख किये हुए आधे मृदगके ऊपर पूरा मृदग रखनेपर जो आकार होता है वही लोकका आकार होता है। लेकिन मृदग गोल होता है और लोक चौकोर है, इतना भेद है।

(२)मनुष्य दोनों पांव फैलाकर दोनों हाथ कमरपर रखकर खड़ा हो जावे। इस समय जैसा आकार बनता है वैसा ही लोकका आकार है। इसलिये भी इसे लोक कहते हैं।

लोकके चारों तरफ घनोदधिवलय है, इसको घनवात और घन वातको तनुवातवलय घेरे हुए है। तनुवातवलयके आगे अनंत आकाश है जिसे अलोकाकाश भी कहते हैं।

लोककी ऊंचाई, चौड़ाई और विस्तार

लोक १४ राजु ऊंचा है। मध्यलोकके अन्त तक और मध्यलोकसे ऊर्ध्वलोकके अन्ततक ७।७ राजु परिमाण होता है।

अधोलोकके नीचे भागमें पूर्वसे पश्चिम अथवा पश्चिमसे पूर्व तक ७ राजु है। अधोलोकसे मध्यलोक तक क्रमसे घटते घटते एक राजुकी चौड़ाई रह जाती है। मध्यलोकसे बढ़ते हुए ब्रह्मलोक अर्थात् पांचवें स्वर्गके अन्त तक ५ राजुका विस्तार अर्थात् चौड़ाई हो जाती

है। फिर क्रमसे घटकर लोकके अन्तमें एक राजुका विस्तार रह जाता है। ऊपरसे नीचे तक १४ राजु लम्बी, १ राजु चौडी चौकोन त्रसनाली लोकके मध्य है।

त्रसनालीकी ऊंचाई अधोलोकसे मध्यलोक तक ७ राजु और मध्यलोकमें एक लाख योजन मेरु पर्वत है। इसके सहित ७ राजु ऊंचा उर्ध्वलोक है।

अधोलोक

मेरु पर्वत रत्नप्रभाके आधारपर है। उससे नीचे प्रत्येक एक २ राजु प्रमाण शर्करा बालुका, पंक, धूम, तम, महातम नामक ६ पृथ्वियां हैं, और इनके नीचे भूमि रहित निगोद आदि पांच स्थावर जीव रहते हैं। नरककी पृथ्वियोंमें कुल ८४०००००चौरासी लाख बिल हैं। पहिली में १,०००००, दूसरीमें १,३२०००, तीसरीमें १,२८०००, चौथीमें १,२४०००, पांचवीमें १,२००००, छठीमें १,१६००० और सातवीमें १०८०००बिल हैं। ये भूमिया पूर्व पश्चिममें लोकके अन्त तक चौडी है।

मेरुके बराबर गहरा एक हजार योजन चित्रा पृथिवी है। इसके नीचे भागमें १६,००० योजनका खरभाग है। खरभागके नीचे८४,००० योजनका पंक भाग है। पंकभागके नीचे ८०,००० योजन मोटा अब्बहुल भाग है। खरभागमें असुर कुमार जातिके देवोंको छोडकर नव प्रकारके भवनवासी और इसी प्रकार राक्षसोंको छोडकर सात प्रकार व्यन्तरदेव रहते हैं। पंकभागमें असुर और राक्षसोंका निवास है। अब्बहुल भागमें नारकी रहते हैं।

मध्यलोक अथवा तिर्यग्लोक

जम्बूद्वीप आदि शुभनाम धारक द्वीप और लवणोदधि आदि शुभ नामवाले समुद्र एक दूसरेसे दुगुने २ होते हुए, स्वयम्भू रमण तक तिरछे २ विस्तारके कारण तिर्यग्लोक अथवा मध्यलोक ...

३॥ उद्धार सागरके रोमोंके समान टुकड़ोंके बराबर असंख्यात द्वीप समुद्र हैं। इन सबके बीचमें जम्बूद्वीप है।

जम्बूद्वीपमें भरत आदि सात क्षेत्र और हिमवत् आदि छह पर्वत हैं। बीचमें मेरु पर्वत है। पद्म और पुंडरीक तालाबसे तीन२ नदियां अपने अपने क्षेत्रसे निकलकर बहकर पूर्व तथा पश्चिम समुद्रोंमें जा मिली हैं।

जम्बूद्वीपमें दो सूर्य और दो चन्द्रमा, लवणोदमें चार २ धातकी खण्डद्वीपमें बारह २, कालोद समुद्रमें ब्यालीस २ सूर्य और चन्द्रमा हैं। पुष्करार्धमें ७ ।७२ सूर्य और चन्द्रमा हैं। इस प्रकार ढाई द्वीपमें १३२ सूर्य और १३२ चन्द्रमा हैं। ढाई द्वीप अर्थात् मानुषोत्तर पर्वत तक मनुष्योंका आवागमन है, उसके आगे नहीं। मानुषोत्तर पर्वतसे आगे ज्योतिष्क विमान स्थिर रहते हैं। इन ज्योतिष्क विमानमें अकृत्रिम सुवर्ण तथा रत्नमय चैत्यालय हैं।

ऊर्ध्वलोक

सौधर्म आदि १६ स्वर्ग, नवग्रैवेयक, नव अनुदिश और विजय आदि पांच अनुत्तर विमान। ये एक दूसरे पटलके ऊपर रहते हैं।

सोलह स्वर्गके ऊपर एकराजुमें नवग्रैवेयकादि हैं और ऊपर मनुष्य लोकके समान पैंतालीस लाख योजन विस्तारवाली सिद्धशिला है। इसके ऊपर घनोदधि, घनवात और तनुवात ये ३ वलय हैं। लोकके अग्रभाग में केवल ज्ञान आदि अनंतगुणधारक श्रीसिद्धपरमेष्ठी निवास करते हैं।

प्रश्नावली

१ लोक किसे कहते हैं, अब समझाओ।
२ ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक और अधोलोक कौनसा है?
३ लोक कितना ऊंचा व चौड़ा है और ७ नरकों व स्वर्गोंकी रचना कैसी है?
४ निगोद, मध्यलोक और सिद्धशिला कहां है?
५ मध्यलोक और ऊर्ध्वलोकका वर्णन करो।

सायाहित्र प्रेस
१६१।१, हरीसन रोड
कलकत्ता ७

नीरोग रहने के
प्राकृतिक
उपाय

समाज कल्प-माला पुष्प—२

नीरोग रहने के

प्राकृतिक उपाय

(द्वितीय संवर्द्धित संस्करण)

●

सम्पादक
तुलसीराम सरावगी
राधाकृष्ण नेवटिया
धर्मचन्द सरावगी

●

प्रकाशक
स्वास्थ्य प्रचार विभाग
मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटी

●

सम्वत् २०१२

प्रकाशक
राधाकृष्ण नेवटिया,
संयोजक स्वास्थ्य प्रचार विभाग
मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटी,
३९१, अपर चितपुर रोड, कलकत्ता ।

द्वितीय संवर्द्धित संस्करण सं० २०१२
मूल्य छ आना

मुद्रक—
उमादत्त शर्मा
रत्नाकर प्रेस
११ ए, सैयद साली लेन
कलकत्ता ७

भूमिका

अधिकतर आदमी, चाहे वे जान या न जानें, किसी न किसी रोग से ग्रस्त हैं। डाक्टरों और वैद्यों की, तथा अस्पतालों और औषधालयों की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है, और ज्यों-ज्यों वह बढ़ रही है त्यों-त्यों नये नये रोगियों की वृद्धि हो रही है। कितने ही आदमी प्रतिदिन भोजन की ही तरह औषधि का सेवन अनिवार्य समझते हैं। खाना खाने के बाद कोई चूर्ण, चटनी, सोडा-लैमनेड या पान बीड़ी आदि का अनावश्यक सेवन करना सभ्यता समझी जाती है। आदमी यह नहीं जानता, या भूल जाता है कि अधिकांश औषधियां हानिकारक हैं, वे एक रोग को दबाती हैं, तो थोडे बहुत समय में उसी या किसी नये रोग को आमन्त्रित करनेवाली होती है। वास्तविक रोग निवारण के लिये भोजन और रहन सहन में सुधार करना चाहिये, और आवश्यकता होने पर प्राकृतिक चिकित्सा अपनानी चाहिये। हमें जितना विश्वास कीमती और खर्चीली दवाइयों में है, उसकी अपेक्षा आधा चौथाई भी सादा जीवन और मिट्टी, पानी, हवा और प्रकाश में हो तो हम कितने अधिक स्वस्थ और सुखी हो सकते है। विशेषता यह है कि ये बातें हमारे वश की है, इसके लिये हमें किसी का आसरा तकने की जरूरत नहीं होती, रुपये-पैसे की जरूरत नहीं होती। पर ये बात इतनी

प्रकाशक
राधाकृष्ण नेवटिया,
संयोजक, स्वास्थ्य प्रचार विभाग
मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटी,
३९१, अपर चितपुर रोड, कलकत्ता ।

द्वितीय संवर्द्धित संस्करण सं० २०१२
मूल्य छ आना

मुद्रक—
उमादत्त शर्मा
रत्नाकर प्रेस
११ ए, सैयद साली लेन
कलकत्ता ७

ध्यान नहीं, सरकार का भी नहीं। सरकारी अधिकारी प्रायः अगरेजों की चलायी परिपाटी के ही समर्थक और पोषक हैं। आवश्यकता है, कुछ सेवा-भावी सज्जन और सस्थाएँ आगे बढ़ें तथा जनता और सरकार को उनका कर्तव्य सुझावें। वर्तमान स्थिति में जो इने गिने व्यक्ति और सस्थाएँ ऐसे साहित्य प्रचार में विशेष रुचि रखती हैं, उनमें मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटी का नाम उल्लेखनीय है। इसने 'समाज-कल्प माला' नाम से समाज के लिये हितकर प्रकाशन आरम्भ किया है। पहली पुस्तिका जो 'घरेलू प्राकृतिक चिकित्सा' नाम से निकली थी, अब परिवर्द्धित रूप में 'नित्य उपयोग में आनेवाली प्राकृतिक चिकित्सा' नाम से निकल रही है और दूसरी पुस्तिका 'नीरोग रहने के प्राकृतिक उपाय' भी परिवर्द्धित रूप मे निकल रही है। इसी तरह अन्य पुस्तकें भी प्रकाश मे आनेवाली है, जो सुन्दर और सस्ती होंगी।

भारतीय ग्रन्थमाला
दारागज, प्रयाग

विनीत
भगवानदास 'केला'

विनम्र निवेदन

पाठक इससे हर्षित होंगे कि 'समाज-कल्प-माला' का द्वितीय पुष्प, "नीरोग रहने के प्राकृतिक उपाय" नाम से सम्बर्द्धित रूप में उनके समक्ष रखा जा रहा है। पहले संस्करण में जहाँ प्रचलित व्यायाम दिए गये थे, वहाँ आदि में नाभिचक्र-शोधन के साथ-साथ कुछ सूक्ष्म व्यायाम भी दे देने की आवश्यकता अनुभव की गयी। सूक्ष्म व्यायाम सर्वाङ्ग प्राण संचारी समझे जाते हैं। इन्हें स्व० महर्षि कार्तिकेयजी महाराज ने विश्व में प्रचारार्थ अपने शिष्यों को सिखाया। इसी उद्देश्य से उनके शिष्य श्री धीरेन्द्रजी ब्रह्मचारी कलकत्ता पधारे। ये व्यायाम उन्हीं से प्राप्त हुए। इनके अतिरिक्त इसमें दिये गये स्थूल व्यायाम सब अंगों को सुपुष्ट करनेवाले हैं।

आशा है, पाठकों द्वारा जैसे पहले संस्करण का स्वागत हुआ, वैसे ही इस संस्करण का भी होगा।

—राधाकृष्ण नेवटिया

नीरोग रहने के प्राकृतिक उपाय

१.

सात बातें

स्वस्थ रहने के लिये सात बातों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है, वे बातें निम्न प्रकार हैं—

१—भोजन, २—व्यायाम,
३—ताजा हवा, ४—आराम,
५—सफाई, ६—शुद्ध विचार,
७—विश्राम,

यदि आप अच्छे-से-अच्छा स्वास्थ्य चाहते हैं तो उसके लिये ऊपर लिखी हुई अच्छी आदतों को व्यवहार में लाने का अभ्यास डालकर एक मजबूत नींव तैयार करें। दुनिया में कोई भी दवा, इंजेक्शन, आपरेशन, जादू, मंत्र आदि ऐसी वस्तु नहीं बनी है, जो हम बराबर स्वस्थ रख सके और हमारी प्राकृतिक अच्छी आदतों का स्थान ले सके।

• २ •

हमारे ज्ञान की माप

विज्ञान
भूगोल
इतिहास
९५% राजनीति
अन्यविषय
५%
स्वास्थ्य और भोजन
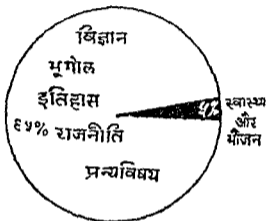
दुःख का विषय है कि आज हम अपने ज्ञान की वृद्धि के लिये बहुत प्रयत्न कर रहे हैं, पर शरीर-रक्षा के ज्ञान की ओर बिलकुल ध्यान नहीं देते। आज भी समाज का बड़े-से-बड़ा विद्वान जिसे विज्ञान, भूगोल और राजनीति आदि का अधिक-से-अधिक ज्ञान है, स्वास्थ्य और भोजन जैसे जरूरी विषय का नहीं के बराबर ज्ञान रखता है।

शरीर को स्वस्थ रखना प्रत्येक व्यक्ति का धर्म है।

इसलिय प्रकृति द्वारा बनाये गये नियमों का पालन करना आवश्यक है। इस पुस्तक में लिखे गय नियमो को आप बार-बार पढ़ें, मनन करें और उन्हे जीवन म उतारें तो उनसे लाभ अवश्य होगा। हो सकता है, आपका जीवन नवीन युग के ढग मे ढल गया हो और ये बात आपको अटपटी सी जान पड, परन्तु थोडा भी मन पर काबू कर लने पर और उन्हें उपयोग में लाने पर आप स्वय अनुभव करेंगे कि आप स्वस्थ जीवन के नजदीक पहुच रहे हैं और रोग वगैरह से कोसों दूर जा रहे हैं।

आज के विद्वान का शारीरिक ढांचा

२

भोजन

स्वस्थ रहने के लिये पर्याप्त मात्रा में अच्छा पौष्टिक भोजन मिलना आवश्यक है। परन्तु आज हम इतने आवश्यक विषय का इतना थोड़ा ज्ञान रखते हैं कि हमें पता भी नहीं कि जो चीजें हम खाते हैं, उनमें जीवनदायिनी शक्ति कितनी है। हमारे भोजन में निरर्थक और हानि

जीवन-शक्ति देनेवाली चीज

[illegible] चीजें इतनी अधिक [illegible] कि [illegible]

अज्ञानवश स्वाद के लिये खाते चले जाते हैं। यदि हमें ठीक ठीक भोजन के उपयोग का ज्ञान प्राप्त हो जाय, तो हम उसी के द्वारा अच्छी-से-अच्छी वैज्ञानिक दवाओं से भी अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

हमारा स्वास्थ्य हमारे शुद्ध खाद्य ही पर निर्भर है, लेकिन लोगों के सामने आज कीटाणुओं की समस्या रखी जाती है। यह बात ठीक है कि कीटाणु हर समय और हर जगह रहते हैं, किन्तु जब हमारा रक्त शुद्ध है और उसमें किसी प्रकार का विजातीय पदार्थ नहीं है, तो वे

स्वस्थ शरीर पर कीटाणु आक्रमण नहीं कर सकते — रोगी पर चारों तरफसे कीटाणु आक्रमण कर रहे हैं

कीटाणु हम पर किसी प्रकार का हमला नहीं कर सकते हैं। अगर उन कीटाणुओं से बचना चाहते हैं, तो

की कर्णिका पर रखें और एक सिरा छाती की किसी एक कर्णिका पर। फिर इसी सिरे को उठा कर छाती की दूसरी कर्णिका पर रखें। यदि धागा बराबर बैठे, तो नाभिचक्र ठीक समझें। यदि दूरी में घट-बढ मालूम हो तो गडबड समझें। यदि नाभिचक्र ऊपर की ओर होगा तो कब्जादि रोग होंगे, दायें-बायें पीडा होगी। नीचे की ओर होगा तो पतले दस्त होंगे।

गडबडी का पता चल जाने पर योग्य जानकार व्यक्ति से नाभिचक्र यथा स्थान करा लें। अथवा १–उत्पादासन, २–मत्स्यासन, ३–चक्रासन, ४–उष्ट्रासन द्वारा करके आप स्वय अपनी नाभि को इसके स्वाभाविक स्थान मे ला सकते हैं। इनको बराबर करते रहने से नाभिमडल ठीक रहता है। इसके बाद व्यायाम करें, तो अवश्य लाभ होगा।

नारी-नाभिचक्र की परीक्षा मे केवल इतनी ही विशेषता है कि उसे भी शवासन मे लिटाकर नाभि-कर्णिका पर धागे का एक दूसरा सिरा पादागुष्ठ के ऊपर। रि पॉ होने पर गडबड, अ

नाभि परीक्षा

से नारियों के भी नाभिचक्र ठीक हो जाते हैं। इन चारों आसनों से नाभिचक्र तो ठीक होता ही है, कई प्रकार के रोग भी दूर होते हैं एव स्वास्थ्य सुन्दर होता है। ये व्यायाम स्थूल व्यायाम में दिये गये हैं। पूर्ण विवरण के लिये वहीं देखें।

• ५ •

सूक्ष्म-व्यायाम

पाठकों के लाभार्थ यहाँ ८ सूक्ष्म व्यायाम दिये जा रहे हैं। इन व्यायामों का प्रभाव मस्तिष्क तथा शरीर के समस्त चक्रों पर पड़ता है। कहा जाता है कि स्वस्थ मन स्वस्थ मस्तिष्क में, और स्वस्थ मस्तिष्क स्वस्थ शरीर मे रहता है।

हमारे ऋषियों ने मानसिक स्वास्थ्य पर अधिक बल दिया है। "मन एव मनुष्याणां कारण बन्ध मोक्षयो.", अर्थात् मन ही मनुष्य के बन्धन और मोक्ष का कारण है। अत. मन के स्वस्थ और प्रसन्न रहने से आपका जीवन

कमार गति व रफ

से नारियों के भी नाभिचक्र ठीक हो जाते हैं। इन चारों आसनों से नाभिचक्र तो ठीक होता ही है, कई प्रकार के रोग भी दूर होते हैं एवं स्वास्थ्य सुन्दर होता है। ये व्यायाम स्थूल व्यायाम में दिये गये हैं। पूर्ण विवरण के लिये वहीं देखें।

: ५

सूक्ष्म-व्यायाम

पाठकों के लाभार्थ यहाँ ८ सूक्ष्म व्यायाम दिये जा रहे हैं। इन व्यायामों का प्रभाव मस्तिष्क तथा शरीर के समस्त चक्रों पर पड़ता है। कहा जाता है कि स्वस्थ मन स्वस्थ मस्तिष्क में, और स्वस्थ मस्तिष्क स्वस्थ शरीर में रहता है।

हमारे ऋषियों ने मानसिक स्वास्थ्य पर अधिक बल दिया है। "मन एव मनुष्याणां कारण बन्ध मोक्षयो", अर्थात् मन ही मनुष्य के बन्धन और मोक्ष का कारण है। अत मन के स्वस्थ और प्रसन्न रहने से आपका जीवन

सुखी रहेगा। आप चाहे शारीरिक श्रम करनेवाले हों या मानसिक, प्रत्येक दशा मे स्वस्थ मस्तिष्क की आवश्यकता है, क्योंकि जीवन-सग्राम मे पद-पद पर सोचने विचारने की आवश्यकता पडती है। समुचित निर्णय से आप कर्मक्षेत्र में विजयी होते हैं और फलत॰ सुखी भी।

इसी हेतु आप के मस्तिष्क से सम्बन्धित व्यायाम यहाँ दिये जा रहे हैं।

१—उच्चारण स्थल तथा विशुद्ध चक्र की शुद्धि

स्थिति—दोनों पैरों को परस्पर सटाकर सीधे खडे हों। एडी से गर्दन तक के अङ्ग सरलता से सीधे हों एव रीढ़ सीधी हो। इस स्थिति में खडे होकर सामने आँखों की सीधे मे, किसी वस्तु को लक्ष्य करके देखिये और उसके पश्चात् ठुड्डी को कण्ठ-कूप से साढ़े चार अगुल ऊपर उठा कर आँखें पूर्ण रूप से खोलिये और मुख बन्द कीजिये।

क्रिया—अब मुँह बन्द रखते हुए लोहार की धौंकनी की भाँति साँस तेजी से लीजिये और छोडिये। इस प्रकार साँस २५ बार लीजिये और छोडिये।

समावस्था—सीधे खड़े हों। पैर के अंगूठे सटे हों। दोनों हाथों को चित्र में दिये ढंग से कण्ठ-कूप के पास ले जाकर ठुड्डी और कण्ठ-कूप के बीच साढ़े चार अंगुल का अंतर रखें।

उच्चारण स्थल की शुद्धि

दोनों पैरों को परस्पर सटाकर सीधे खड़े हों। एड़ी से गर्दन तक के अङ्ग सरलता से सीधे हों एवं रीढ़ सीधी हो। इस स्थिति में खड़े होकर सामने आँखों की सीध में, किसी वस्तु को लक्ष्य करके देखिये और उसके पश्चात् ठुड्डी को कण्ठ-कूप से साढ़े चार अंगुल ऊपर उठा कर आँखें पूर्ण रूप से खोलिये और मुख बंद कीजिये।

दोनों पैरों को परस्पर सटाकर सीधे खड़े हों। एड़ी से गर्दन तक के अङ्ग सरलता से सीधे हों एवं रीढ़ सीधी हो। दोनों हाथों और उनके अँगूठों को परस्पर जोड़ कर ऊपर की ओर देकर सीने के बीच लगाइए और अपने इष्टदेव का ध्यान कीजिए। ज्यों ज्यों मन एकाग्र होता जाय, त्यों त्यों अँगूठों को ढीला करते जाइए।

प्रार्थना

लाभ—इस व्यायाम से उच्चारण स्थल की शुद्धि होती है और कफ पित्त-वात-जनित रोग दूर होते हैं।

२—प्रार्थना

स्थिति—पहले व्यायाम की स्थिति मे खडे होकर दोनों हाथों और उनके अँगूठों को परस्पर जोड कर उन्हें जोर देकर सीने के बीच दबाइए और अपने इष्टदेव का ध्यान कीजिए। ज्यों-ज्यों मन एकाग्र होता जाय, त्यों-त्यों अगूठों को ढीला करते जाइये।

लाभ—इससे मन में आये हुए विकार दूर होते है और वह स्थिर एव स्वस्थ होता है। अगूठो को सीने के मध्य भाग में दबाने मे मनोवहा नाडी की ऊर्ध्व-गति होती है और ध्यान केन्द्रित होता है।

३–बुद्धि तथा धृतिशक्ति विकासक

स्थिति—पूर्व स्थिति मे खडे हों और मुँह बन्द करके शिर को पीछे की ओर झुकाये और आँखें पूर्णरूप से खोल कर आकाश की ओर देखें।

क्रिया—नाक के दोनों छिद्रों से लोहार की धौंकनी की भाँति, यथाशक्ति तेजी से सांस लें और छोड़ें। आरम्भिक क्रम २५ बार।

लाभ—इस क्रिया में जो श्वास प्रश्वास किया जाता है, उसका आघात-प्रतिघात शिखा के नीचे मस्तिष्क में जो बुद्धिस्थल है, उस पर पड़ता है। यहाँ घड़ी की सुई की भाँति एक सूक्ष्म नाड़ी है जो चलती रहती है। इसकी चाल में खराबी होने से ही बुद्धि मन्द या विकृत होती है। इस व्यायाम से वह नाड़ी सबल होती है एवं ज्ञान तन्तु के जागृत होने से बुद्धि तेज होती है और धृति-शक्ति भी बढ़ती है।

४—स्मरण शक्ति-विकासक

स्थिति—पूर्व स्थिति में खड़े होकर ग्रीवा को समावस्था मे रखें और सामने, अपने पैरों से डेढ गज की दूरी पर दृष्टि जमीन पर जमायें।

क्रिया—तीसरी क्रिया की भाँति तेजी से साँस लें और छोड़ें। आरम्भिक क्रम २५ बार। इस क्रिया से स्मरण शक्ति बढ़ती है।

नेत्र शक्ति विकासक

मधा गति विश्रामक

५—मेधा-शक्ति-विकासक

स्थिति—पूर्व स्थिति में खडे होकर आँखों को बन्द करें और ठुड्डी को कण्ठ-कूप से लगायें।

क्रिया—गर्दन के पीछे के गड्ढीले कोमल भाग—मेधा स्थान पर ध्यान रखते हुए, जोर से नाक से श्वास खींचिये और छोडिये। आरम्भिक क्रम २५ बार।

लाभ—इस क्रिया से मेधा-शक्ति बढ़ती है एव प्राण सुषुम्नावाही होता है।

विशेष द्रष्टव्य—उपर्युक्त १ से ५ तक की क्रियाओं से मस्तिष्क में होनेवाले कफ-पित्त-वायु जनित दोष मिटते हैं और शरीर के आन्तरिक समस्त चक्रों की शुद्धि होती है।

६—नेत्रशक्ति-वर्धक

स्थिति—पूर्व स्थिति में खडे होकर ग्रीवा को पूर्ण पीछे की ओर झुकाकर खडे हों।

क्रिया—दृष्टि से दोनों भौंहों के बीच, तिलक

लगाने की जगह एकटक देखें और आँखों से पानी आने के पहले ही आँखों को मींच लें। उसके बाद फिर आरम्भ करें। आरम्भिक क्रम ५ बार।

लाभ—यह त्राटक की एक क्रिया है। इससे आँख की ज्योति बढ़ती तथा उनके रोग दूर होते हैं।

७—कपोल-शक्ति-वर्धक

स्थिति—दोनों हथेलियों को मिला कर, अगुलियों को उर्ध्वमुखी रखते हुए दोनों अगूठों से दोनों नासिका रन्ध्रों को बन्द करें।

क्रिया—सामने देखते हुए मुख को कौवे की चोंच की भाँति बना कर उससे तेजी से वायु को अन्दर खींचे। तत्पश्चात् ठुड्डी को कण्ठ-कूप से लगाकर गाल फुलाते हुए आँख मींचें और यथा साध्य कुम्भक करें। उसके अनन्तर गले को सीधा करके सामने देखते हुए दोनों नासिका रन्ध्रों से अन्दर की वायु को धीरे धीरे बाहर निकालें। ध्यान रहे कि रेचक करने (वायु को

बाहर निकालते) समय वायु की आवाज कान से न सुनाई पड़े। आरम्भिक क्रम ५ बार।

लाभ—इससे कपोल की शुद्धि होती है। दाँत सुदृढ़ एवं पायरिया आदि रोगों से बचे रहते हैं। पिचके गाल भर जाते हैं। मुह पर होनेवाले फोडे फुंसियाँ नहीं होतीं तथा झुर्रियाँ जाती रहती हैं। मुख की कांति बढ़ती है।

८—कर्ण-शक्ति-वर्द्धक

स्थिति—पूर्ववत्।

क्रिया—मुख बन्द करके दोनों अगूठों से कानों के विवरो को, दोनों तर्जनियो से दोनो आँखों को, दोनों मध्यमाओं से नासा-रन्ध्रों को दोनों अनामिकाओं से, ऊपर के होंठ को और कनिष्ठकाओं से नीचे के होंठ, अधर को बन्द करें। फिर मुख को काक की चोंच की भाँति बना कर शीत्कार करते हुए जोर से साँस लीजये। इसके बाद जलन्धर बन्ध लगाइये—अर्थात् ठुड्डी को कण्ठकूप से लगाकर साँस रोकिये जिससे कपोल भी वायु से भरकर फूल जायँ। इसे कुम्भक कहते हैं। जब साँस छोड़ने की

इच्छा होने लगे तब ठुड्डी को कण्ठकूप से हटाकर ग्रीवा को समावस्था में लाइये, आँखें खोलिये और दोनों नासिका-रन्ध्रों से धीरे धीरे साँस छोड़िये।

लाभ—इस क्रिया से कर्णमूल आदि, कान के सब रोग दूर होते हैं और श्रवण शक्ति बढ़ती है।

: ६ :

स्थूल व्यायाम

शरीर को तन्दुरुस्त रखने के लिये व्यायाम करना नितान्त आवश्यक है। सुबह ताजी और खुली हवा में घूमना दुनिया के सर्वोत्तम व्यायामों में गिना जाता है। इससे शरीर के सारे अङ्गों का व्यायाम हो जाता है, परन्तु घूमते समय लम्बी-लम्बी साँसें लेनी आवश्यक है। चाल न बहुत तेज हो और न बहुत धीमी। झुक करके न चलें। पैर के जूते हलके होने नंगे पैर घूम सकें तो और हों। नगे पैर घूमने से फार्क

किसी भी कारण से घूमने का समय न निकाल सकते हों, तो घर में ही खुली खिड़की के सामने कम-से-कम

सुबह का व्यायाम और टहलना

निम्नलिखित व्यायाम करें तो अधिक लाभ होगा। यहाँ कुछ व्यायाम और उसके नियम दिये जाते हैं।

१—जमीन पर केहुनी के बल चित सोकर बायें पैर को और फिर दायें पैर को ऊपर उठायें। केवल कमर के नीचे के हिस्से को ऊँचा उठावें। इस प्रकार दोनों पैरों को क्रमानुसार ऊपर [illegible] प्रथम दिन कम-से-कम पाँच बार [illegible]

१२ तक ले जायँ। ध्यान रहे कि घुटने न मुडने पायें।

चित्र न० १

चित्र नम्बर १ देखने से व्यायाम अच्छी तरह से समझ में आ जायगा।

२—व्यायाम नम्बर १ की तरह दोनों पैरों को एक साथ उठायें और नीचे लायें। प्रथम दिन हर पैर को कम-से कम पाँच बार उठावें और रोज एक-एक बार बढाकर १२ तक ले जायँ। ध्यान रहे कि घुटने न मुडने पायें।

३—व्यायाम न० १ की तरह लेट जायँ और दोनों पैरों को एक साथ ऊपर ले जायँ, फिर उन्हें चौडा कर नीचे लायें। उसी प्रकार कम-से कम प्रथम दिन ५ बार कर के प्रतिदिन एक एक बार बढाकर १२ तक ले जायँ।

४—पैर लम्बे करके बैठ जायँ और हाथ सिर के ऊपर कर लें और कमर के ऊपरी हिस्से को सामने की ओर झुकाकर हाथ से पैर के अगूठों को छूने का प्रयत्न करें। प्रथम दिन हर पैर को कम से कम पाँच बार छुएँ

चित्र न० २

और प्रतिदिन एक-एक बार बढा कर १२ तक ले जायँ। ध्यान रहे कि घुटने मुडने न पायें।

चित्र नम्बर २ देखने से व्यायाम अच्छी तरह समझ मे आ जायेगा।

५—जमीन पर चित लेटें, पर हाथ सिर के ऊपर ही रखें। अब कमर के ऊपर के हिस्से को उठाकर पैर के अगूठों को हाथ से छूने का प्रयत्न करें। फिर आखिर में पूर्ववत् लेट जायँ। इस तरह प्रथम दिन कम-से-कम ५ बार और फिर धीरे-धीरे करके रोजाना एक-एक बढाते हुए १२ तक ले जायँ।

६—जमीन पर चित लेट जायँ और हाथों को बगल में रखें, पैरों को ऊपर उठायें—साथ ही सिर और कमर के बीच के हिस्से को भी ऊपर उठायें। पर इस बात का ध्यान रहे कि शरीर एकदम सीधा रहे। इसको कम-से कम ५ सेकण्ड से बढ़ाकर १ मिनट तक करना चाहिये।

७—मुँह जमीन की ओर करके उलटे लेट जाय, हाथ कन्धे के पास मोडकर रखें, कन्धे और सिर को धीरे धीरे उठायें और एक सेकण्ड ठहर कर फिर पहले की तरह

चित्र नं० ३

लेट जाय। इस प्रकार एक दिन में कम से कम ५ बार से शुरू करके प्रतिदिन एक-एक बढाते हुए १२ तक ले जाय। चित्र नम्बर ३ देखें।

उपर्युक्त व्यायाम के लिये किसी प्रकार के सामान

की जरूरत नहीं होती है और वह बिना किसी झझट के हर एक स्थान में किया जा सकता है।

सर्वाङ्गासन

विधि—

सारा शरीर पीछे से गर्दन तक उठावें। पीठ को दोनों हाथों का सहारा देकर पैरों को सीधा ऊपर की तरफ इतना सीधा रक्खें कि पैर के अगूठे का सिरा आँखों
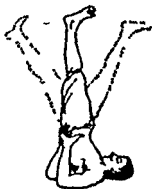
की सीध मे रहे। पैरों के तलवें एव अँगुलियाँ ऊपर की ओर तनी रहें। श्वास की क्रिया साधारण, जैसे लेटते हैं, लेटें। क्रम—१ मिनट से ५ मिनट तक ले जायँ।

इससे गर्दन, छाती, कमर, पेट और हृदय शुद्ध और बलवान बनते है। आयु की वृद्धि होती है।

उत्तानपादासन

विधि—

१ पृथ्वी पर सीधे होकर लेट जाइये।

२ शरीर को ढीला छोड दीजिये, गहरी साँस लेकर शरीर को कडा कर लीजिये।

३ धीरे-धीरे दोनों पाँवों एव गर्दन को ऊपर उठायें। वेग से उठाने से कोई लाभ नहीं होगा, अत ध्यान रक्ख कि शरीर कडा रहे और धीरे-धीरे ही दोनो पाँव एव गर्दन ऊपर की तरफ उठाते जायँ।

४. जितनी देर तक आप पाँवों एव गर्दन को उठा कर रोक सकें, रोकें। क्रम—१ मिनट से ५ मिनट तक।

५ ज ... पुन
धीरे पैरों ... करें

लाभ—

१ कमर म ताक़त आती है और रीढ की हड्डी मजबूत होती है।

२ अजीर्ण का नाश होता है और शौच शुद्धि मे सहायता मिलती है।

३ भूख लगती है और आमाशय के विकारों का नाश होता है।

४ पेट का आकार ठीक रहता है और कमर भी पतली एव ताक़तवर होती है। स्त्री पुरुष समान रूप से इसे कर सकते हैं।

मत्स्यासन

विधि—

१ पहले पृथ्वी पर चित लेटें और दोनों हाथों को मोड कर सिर के नीचे तकिये की तरह लगा कर रखें।

२ दोनों पैरों को मोड कर पालथी मार लें। लेटे लेटे पालथी मारना जरा मुश्किल होता है, अत, पहले

बैठ कर पालथी मार लें और फिर धीरे धीरे कमर को झुका कर सिर पृथ्वी पर लेटने की अवस्था में रख लें।

३ घुटनों का पृथ्वी पर समतल रहना आवश्यक है। सारा शरीर अच्छी तरह कड़ा रखें। यदि शरीर का कोई भी भाग ढीला हो गया, तो हानि हो जाने की सम्भावना रहती है।

४ कम-से कम २ मिनिट और अधिक से अधिक ५ मिनिट तक इसे कर सकते हैं।

लाभ—

१ शरीर नीरोग होता है, रीढ की हड्डी, जो शरीर को सीधा रखने का कार्य करती है, अधिक मजबूत होती है और कमर से सिर तक के सारे अंगों मे शक्ति अधिक बढती है।

२ मस्तिष्क की शक्ति बढाने मे यह आसन अधिक लाभदायक सिद्ध हुआ है।

३ तैरने वालों के लिये यह आसन अधिक लाभदायक है। अक्सर अधिक दक्ष तैराक इस तरह पानी पर भी तैरते हैं। मछली इसी तरह तैरती है। इससे अजीर्ण का पूर्ण नाश हो जाता है। थकावट को दूर करने के लिय यह आसन श्रेष्ठ है। स्त्री-पुरुष इसे समान रूप से कर सकते हैं।

उष्ट्रासन

विधि—

१ पृथ्वी पर उलटे लेटें।

२ हाथों को कन्धे के पास से घुमा कर पैरों को ऊपर से उल्टा उठायें और पिंडलियों को पकड कर खींच लें।

३ नाभि के पास का चार-पाँच इच का भाग ही पृथ्वी पर टिकायें और समस्त शरीर को कडा कर के उठा लें। इस क्रिया से शरीर का सारा भार हाथ और पैरों पर सध कर नाभि के ऊपर आ जायेगा।

४ हाथों को आगे की तरफ और पैरों को पीछे की तरफ खींचने से दोनों अगों पर समान खिंचाव

पड़ता है। इस तरह शरीर का आकार धनुष के समान

हो जाता है, अत: इसे धनुरासन भी कहते हैं। क्रम—१ मिनिट से ३ मिनिट तक।

लाभ—

१ यकृत और प्लीहा के रोग दूर होते हैं।

२ आमवात के सारे रोगों का नाश होता है।

३ पेट के सारे रोगों के साथ साथ रीढ़ की हड्डी तथा पीठ की अन्य हड्डियों को भी पूर्ण लाभ होता है।

स्त्री-पुरुष इसे समान रूप से कर सकते हैं।

चक्रासन

विधि—

१ प्रथम आसन पर सीधे लेट जाइये। इसके पश्चात् दोनों हाथों की हथेली तथा दोनों पाँवों के पञ्जों को पृथ्वी पर जमा दीजिये।

२ तत्पश्चात् धीरे धीरे पीठ को ऊपर की ओर उठाइये और यहाँ तक उठाइये कि हाथ और पाँव दोनों के बल पर सम्पूर्ण शरीर स्थिर रहे।

३ बाद को धीरे-धीरे हाथों और पाँवों को समीप लाने की चेष्टा कीजिये जिससे कि शरीर बिलकुल गोलाकार हो जाय।

४ नेत्रों को ठीक सीधे में खुले रखिये और सामने की ओर दृष्टि डालिये। क्रम—१ मिनट से ३ मिनट तक।

लाभ—

१ पेट और कमर के प्रत्येक भाग को लाभ पहुँचता है। सीने के ऊपर की ओर हो जाने से कमर टेढ़ी नहीं होती।

२. कमर का दर्द, कोष्टबद्धता, जीर्ण ज्वर तथा कृमि दोष आदि रोगों का नाश होता है।

३. आमाशय की सारी नसें खिंच कर सीधी हो जाती हैं। नसों के सीधे हो जाने के कारण पेट की पाचन-शक्ति शीघ्र ही ठीक होती है। अजीर्ण आदि रोगों के लिये यह आसन सर्वोत्तम है।

४ गर्दन, कंधे, जांघ आदि अगों को सुडौल बनाने के लिये इससे अधिक उत्तम आसन नहीं हो सकता। खेलने वालों के लिये यह आसन सर्वोत्तम है। स्त्री पुरुषों के लिये समान है।

शीर्षासन

विधि—पहिले जमीन पर एक मुलायम, गोल लपेटा हुआ वस्त्र रख कर उस पर अपने मस्तक को रखें, फिर दोनों हाथों के तलवों को मस्तक के पीछे लगाकर शरीर का उल्टा ऊपर उठाकर सीधा खडा कर दें, आरम्भ में इसे करना सभव नहीं है। प्रथम आप दिवाल के सहारे एव किसी ढालू तख्ते को दिवाल के सहारे खड़ा करके उस पर

अभ्यास करें। कुछ दिन बाद ही आप बिना सहारे के इसे करने लगेंगे।

एक बात का ध्यान रखें कि शीर्षासन में ललाट के बल पर ही खड़ा होना चाहिये। मस्तिष्क के मध्य भाग पर बल देकर खड़े होने से अत्यधिक हानि होती है,
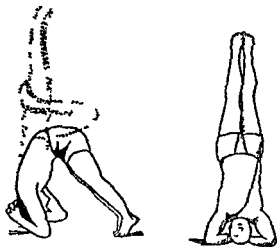
यहाँ तक कि लोग गलत शीर्षासन तक हो जाते हैं।

लाभ —

१—रक्त नसों और केशिकाओं में सचारित होता है।

२—वात, ज्वर, श्वास, उदर रोग, कटिवात, प्रमेह आदि रोग दूर होते हैं। यह क्रिया २ मिनट से ५ मिनट तक स्त्री पुरुष दोनों ही कर सकते हैं।

• ७ •

ताजी हवा

हम कई दिनों तक बिना भोजन और जल के रह सकते हैं, परन्तु बिना हवा के कुछ मिनट भी जीवित रहना असम्भव है। इससे यह स्पष्ट जाहिर होता है कि हवा हमारे लिये कितनी जरूरी है। हम जब भी मौका मिले, खुली हवा में लम्बी लम्बी साँस लेने का अभ्यास करना चाहिये। इसे दिन में कई बार करने का

खिडकियाँ खुली हैं

प्रयत्न करना चाहिये। रात और दिन जहाँ तक सम्भव हो, खिडकी को खुली ही रहने दें और सदा खुली और ताजी हवा में ही साँस लें। इससे फेफडे की शक्ति बढती हैं और बीमारियाँ निकट नहीं आतीं। बहुत से लोग गरमी और हवा के डर से खिडकियाँ बन्द करके सोते हैं। उन्हें यह अभ्यास छोडना

सोने का गलत तरीका

चाहिये। कुछ लोग रजाई, चादर आदि से मुँह ढककर सोते हैं। यह भी बहुत गलत तरीका है। अपनी छोडी हुई साँस को बार बार लेना कै किये हुए पदार्थ को उपयोग में लाने के समान है।

दिन भर मेहनत करने के बाद रात्रि को आराम करके हम अपने में नई शक्ति तैयार करते हैं, इसलिये स्वस्थ रहनेके लिये ६ घटे से लेकर ७ घटे तक का सोना आवश्यक है। बच्चों के लिये ८ घटे सोना ठीक माना गया है। यदि आपको निर्विघ्न निद्रा आती है, तो आपका दिमाग स्वत ताजा रहेगा। सोने के समय मुँह हाथ

आँखों को भी ठंडे जल से पाँच-सात बार धो लें। सोने के लिये जमीन पर चटाई या काठ के तख्ते पर चटाई

सोने का सही ढंग

बिछाकर दाहिने करवट सोना सर्वोत्तम है। दूसरे दर्जे में पलंग पर मामूली बिछावन बिछा कर सोना चाहिये, पर स्प्रिंगवाले पलङ्ग का कभी व्यवहार भी नहीं करना चाहिये। इसमें मेरुदण्ड टेढ़ा होने के कारण पूरा आराम नहीं मिलता। जब सोने के लिये जाय, तो किसी प्रकार की चिन्ता न हो। विचार बिलकुल शुद्ध हो। देश और समाज की शुभ कामना के विचार को लेकर ही सोवें।

शरीर के अन्दर तथा बाहर दोनों हिस्सों की सफाई बहुत जरूरी है। यदि खान पान के नियम का ठीक से

पालन करें तो उसकी आदत स्वत ही पड जायगी।

शरीर रगड़ कर नहाना

हम अपने गलत खान पान के कारण ही भीतर की सफाई में बाधक हो जाते हैं। आँतों की सफाई के लिये हमारा भोजन विशुद्ध होना बहुत जरूरी है।

हमारी त्वचा भी हमारे शरीर के दोषों को निकालने में सहायक है। इसलिये इसको स्वच्छ और साफ रखना हमारे लिये बहुत जरूरी है। साफ पानी से स्नान करने और मोटे कपडे से रगड-रगड कर बदन को धोने मे शरीर में एक तरह की स्फूर्ति आती है और स्वास्थ्य ठीक रहता है। ठडे जल से स्नान करके शरीर को पोछ कर सूखे तौलिया रगड करके उसको गुलाबी बना लिया जाय तो वडा ही लाभप्रद होगा। शरीर के बाल छोटी उम्र मे ही सफेद न हो और

स्नान क बाद गमछे से पोंछना

न उडें, इसके लिये उन्हें कंघी से रगड कर साफ करना चाहिये और उन्हें पकड कर थोडा खींचना भी चाहिये इससे बालों की जडें मजबूत होती हैं।

नाक हमारे साँस लेने का मुख्य द्वार है। हवा में जो धूलि-कण उडते हैं, हमारे नाक की दीवालों के बालों में चिपक जाते हैं, अतः नित्य मुँह धोते समय काफी पानी का व्यवहार कर इसे साफ करना चाहिये। आँखों को भी पाँच सात बार ठंडे पानी के छपकों या छींटों से धोना

नीचे का हिस्सा रगड कर साफ करें।

आँख धोना

दातून करना

चाहिये। इससे आँखें साफ और ठंडी रहेंगी और चश्मे की जरूरत जल्दी नहीं पड़ेगी। दाँत और जीभ की सफाई बहुत आवश्यक है। सर्वोत्तम नीम और बबूल की दातुन से मुँह धोना चाहिये। इससे पायरिया आदि नहीं होता। इसके अलावे टूथ-ब्रश नीम मंजन या सोसायटी के लाल मंजन से दाँत धोना चाहिये।

शुद्ध विचार

सार्वजनिक सेवा के शुद्ध विचार

जैसा आपका विचार होगा, वैसा ही आपका जीवन होगा और वैसा ही आपका स्वास्थ्य होगा, क्योंकि विचार

का स्वास्थ्य पर बड़ा असर पड़ता है। इसलिये हर समय शुद्ध और साफ विचार रखने चाहिये। चिन्ता, भय, डाह

नियमित खान-पान से रहनेवाला सुखी परिवार

आदि से दूर रहना चाहिये। ध्वंसात्मक के बदले क्रियात्मक विचार रखें। बिना शुद्ध विचार के आपका शरीर स्वस्थ नहीं रह सकता।

विश्राम

दिन में काम करते करते मामूली थकान का आना

स्वाभाविक है। इसलिये कुछ मिनटों या सेकंडों के लिये

विश्राम

शरीर को ढीला कर विश्राम करना चाहिये।

नित्य के नियम

१—सुबह उठते ही एक गिलास पानी पीना चाहिये। जिनको कब्जियत की शिकायत हो, वे उसमें नींबू का रस मिला लें, परन्तु उसमें भूलकर भी नमक या चीनी न मिलायें। सुबह ही चाय या तम्बाकू पीकर शौच जानेवालों की आदत इसके व्यवहार से छूट जायगी।

६ बजे सुबह उष पान

२—शौच के बाद कुछ मिनट के लिये खुली जगह में या खिड़की के सामने व्यायाम करें, फिर ठंडे जल से स्नानादि करके शरीर को अच्छी तरह सूखे गमछे या तौलिये से रगड़ करके पोंछ डालें और उसे रगड़ कर गुलाबी कर डालें। इस क्रिया से स्फूर्ति और ताजगी अवश्य आवेगी और दिन भर का कार्य अच्छी तरह से सम्पन्न होगा।

६ बजे का व्यायाम

३—सुबह के जलपान में मौसम के फल, जैसे—खीरा, ककड़ी, गाजर, बिजौरा, टमाटर इत्यादि शामिल हैं। दूध, ताजे मीठे फल और सूखे मेवे या अकुरित चने, मोठ, नारियल, गुड़ इत्यादि से जलपान करें। सुबह

८ बजे का हल्का नाश्ता

मिठाई, तली हुई चीजें, कहवा आदि का बिलकुल त्याग कर दें।

उपर्युक्त लिखी हुई कहावत के अनुसार रात को ९ या १० बजे के लगभग सो जाना चाहिये और सोने के तीन-चार घण्टा पहले भोजन कर लेना चाहिये। यदि हो सके तो स्नान करके सोवें। सोने के समय अपनी सारी चिन्ताओं को खूँटी पर टाँग दें। छ घटे शान्ति की नींद लें और ब्राह्म मुहूर्त मे ४ ५ बजे प्रात उठें। उपर्युक्त बातों पर यदि हम ध्यान देते रहे, तो स्वस्थ रहना जितना ही आसान है, बीमार पडना उतना ही कठिन है। बीमारी तो हमारे अनाचार द्वारा ही आती है और उससे हमें नाना प्रकार के कष्ट झेलने पडते हैं।

सोने का समय